खंड 4
राजनीतिक सिद्धांत में बहस

खंड 4 राजनीतिक सिद्धांत में बहस

खंड 4, में चार इकाइयाँ है, जो राजनीतिक सिद्धांत के विषय के बारे में प्रमुख तर्क-वितर्को को प्रस्तुत करती है। **इकाई 11**, लोकतंत्र और आर्थिक विकास के बीच संबंधों पर चर्चा करती है। यह तर्क देता है कि लोकतंत्र और आर्थिक विकास के बीच के संबंध में कोई निश्चित साक्ष्य नही है। **इकाई 12**, स्वतंत्रता तथा नियंत्रण (सेंसरशिप) के बीच मूलभूत वाद-विवाद पर प्रकाश डालती है और तर्क देती है कि किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता, जो अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता को बाधित करती है, उसे प्रतिबंधित करना होगा। लेकिन साथ ही, व्यक्तियों के स्वतंत्र विचार-विमर्श को नियंत्रित करने के मकसद् से थोपे गए किसी भी प्रश्ननुचित प्रतिबंध को, नागरिकों द्वारा लोकतंत्र के सच्चे प्रश्नादर्शों को पुनःस्थापित करने हेतु चुनौती दी जानी चाहिए। **इकाई 13**, रक्षात्मक भेदभाव एवं निष्पक्षता के सिद्धांत के बीच के वाद-विवाद पर प्रकाश डालती है। इसमें कहा गया है कि लोकतंत्र की उन्नति के लिए, हमें वंचितों एवं हाशिए के लोगों की सुरक्षा हेतु ऐसी समुचित कार्यवाही करनी चाहिए जिससे उनकी परिस्थितियां पहले से समृद्धि व ताकतवर वर्ग के लोगों के समकक्ष हो जाएं। प्रश्नतिंम **इकाई 14**, परिवार, कानून और राज्य के बीच के रिश्तो से संबंधित है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 11 लोकतन्त्र बनाम आर्थिक विकास*

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 लोकतन्त्र और आर्थिक विकास का अर्थ

11.2.1 लोकतन्त्र की संकल्पना

11.2.2 आर्थिक विकास

11.3 लोकतन्त्र और आर्थिक विकास एक-दूसरे के अनुरूप नहीं हैं

11.4 लोकतन्त्र और आर्थिक विकास एक-दूसरे के अनुरूप हैं

11.5 सारांश

11.6 संदर्भ

11.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप लोकतन्त्र और आर्थिक विकास की संकल्पना के बारे में जानेंगे और यह भी कि ये किस प्रकार से एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- लोकतन्त्र और आर्थिक विकास का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे; तथा
- किस प्रकार से लोकतन्त्र आर्थिक विकास को प्रभावित करता है और उसी तरह से, आर्थिक विकास कैसे लोकतंत्र को प्रभावित करता है इसको समझ सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

लोकतन्त्र और आर्थिक विकास के बीच सम्बन्ध होता है। इस सम्बन्ध में कुछ विशेषज्ञ यह तर्क देते हैं कि दोनों ही एक-दूसरे के अनुरूप हैं जबकि कुछ अन्य विशेषज्ञों का कहना है कि वे एक-दूसरे के अनुरूप नहीं हैं। आगे आने वाले अनुच्छेदों में, लोकतन्त्र और आर्थिक विकास के बीच सम्बन्धों पर सूक्ष्म दृष्टि डालकर, दोनों प्रकार के पक्षों के तर्कों की इस इकाई में समीक्षा की जाएगी।

11.2 लोकतन्त्र और आर्थिक विकास का अर्थ

11.2.1 लोकतन्त्र की संकल्पना

लोकतंत्र की संकल्पना आज से करीब 2500 वर्ष पहले अर्थात् 500 ई.पू. के आस-पास एथेंस में अस्तित्व में आई। इसी तरह 'डेमोक्रेसी' शब्द का उद्भव यूनानी शब्द 'डेमोक्राटिया' (Demokratia) से हुआ है। जो कि दो यूनानी शब्दों 'demos' अर्थात् 'लोग' और 'kratos' अर्थात् 'शक्ति' से मिलकर बना है। इस प्रकार लोकतंत्र का मतलब 'लोगों के द्वारा शासन' होता है जो कि सरकार को सच्चे अर्थों में वैद्यानिकता प्रदान करता है। 'लोकतंत्र' राजनीति

*डॉ. अनुराग त्रिपाठी, क्राइस्ट (डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी), बैंगलुरू

विज्ञान के क्षेत्र में सर्वाधिक चर्चित मुद्दा है, इस कारण यह सर्वाधिक विवादास्पद संकल्पना भी है। यद्यपि लोकतंत्र को क्रियान्वित कैसे किया जाय इसे लेकर मत भिन्नता है, फिर भी लोकतंत्र के अर्थ को लेकर एक सामान्य सहमति बनी हुई है। इसी कारण लोकतंत्र के विभिन्न प्रकार हैं, यथा–प्रत्यक्ष, प्रतिनिधि, विमर्शी। इस विचार को लेकर संचेतना है कि लोकतंत्र का आशय लोकप्रिय शासन और संप्रभुता है, लेकिन इसे प्राप्त कैसे किया जाए इसे लेकर मत भिन्नता है। लोकतंत्र के अभ्यास में अनेक प्रकार के अंतर्विरोध अन्तर्निहित हैं। लोगों की सहभागिता को कैसे सुनिश्चित किया जाए, स्वतंत्रता और समानता के बीच संतुलन कैसे बनाया जाए, अल्पसंख्यक अधिकारों की रक्षा कैसे की जाए, बहुसंख्यक की तानाशाही को कैसे टाला जाए इत्यादि कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनसे लोकतंत्र को जूझना है। अन्य प्रकार की शासन-प्रणालियों की अपेक्षा लोकतंत्र के बहुत से लाभ हैं। यह आतताइयों के शासन से रक्षा करता है, मानव-विकास की देख-रेख करता है, व्यक्तिगत अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा हेतु सुविधाएँ प्रदान करता है और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर युद्ध से रक्षा करता है क्योंकि सामान्यतः लोकतान्त्रिक देश आपस में नहीं लड़ते। जे.एस. मिल ने अपनी पुस्तक '*कंसीडरेशन ऑफ रिप्रेजेन्टेटिव गवर्नमेंट*' 1861 में लोकतान्त्रिक निर्णय-निर्माण के तीन लाभ बताये हैं। पहले, रणनीतिक तौर पर लोकतंत्र नीति-निर्माताओं को बाध्य करता है कि वे लोगों के अधिकारों, मतों और हितों के प्रति उत्तरदायी बने रहें, जैसा कि कुलीनतंत्र या अधिकनायतंत्र में नहीं होता है। दूसरा, ज्ञानमीमांसा के तौर पर लोकतंत्र में विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों कि उपस्थिति होती है, जिससे नीति-निर्माताओं को उनमें से सर्वोत्तम को चुनने का मौका मिलता है। तीसरा, लोकतंत्र तार्किकता, स्वायतता और स्वतंत्रता जैसे विचारों को समाहित कर नागरिकों के चरित्र निर्माण में सहयोग प्रदान करता है। यह लोकमत का दबाव बनाता है और राजनेताओं द्वारा सत्ता में बने रहने के लिए इसे नजरअंदाज करना संभव नहीं हो पाता।

अपने प्रारंभिक स्वरूप में लोकतंत्र का विचार यूनान से आया, जो कि समावेशी स्वरूप में नहीं था। लोकतंत्र का यूनानी मॉडल महिलाओं, दासों और प्रवासियों को समाहित नहीं करता, इस अर्थ में यह खुद को अलोकतांत्रिक बना देता है। आधुनिक लोकतन्त्रों में भी इस तरह के तत्व विद्यमान रहे हैं, जैसे कि फ्रांस, ब्रिटेन, अमेरिका आदि में भी कुछ वर्ग को मतदान से वंचित रखा गया था, जबकि मताधिकार सम्पत्तिशाली लोगों को दिया गया था। 1789 की फ्रांसीसी क्रांति में लोकप्रिय संप्रभुता के साथ-साथ स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की बात की गयी। यद्यपि उस समय महिलाओं को मतदान का अधिकार नहीं मिला और फ्रांस में 1944 में जोकर सार्वजनीन व्यस्क मताधिकार लागू किया गया। ब्रिटेन में महिलाओं को मतदान का अधिकार 1928 में मिला, जबकि अमेरिका में 1920 में। इसके बावजूद अमेरिका में रंगों के आधार पर भेदभाव विद्यमान रहा और 1965 में जाकर अफ्रीकी-अमेरिकी पुरुषों और महिलाओं को मतदान का अधिकार मिला। इस सन्दर्भ में पश्चिमी लोकतन्त्रों से तुलना किया जाए तो भारत अधिक प्रगतिशील रहा है क्योंकि भारत में सार्वजनीन व्यस्क मताधिकार 1950 अर्थात् संविधान लागू होने की तिथि से ही प्रभाव में है। इस प्रकार भारत दुनिया में पहला ऐसा लोकतान्त्रिक देश है जहाँ संविधान लागू होने की प्रारंभिक तिथि से ही सार्वजनीन व्यस्क मताधिकार लागू है। सऊदी अरब महिलाओं को मताधिकार देने वाला नवीनतम देश है, जहाँ 2015 के नगर-पंचायत के चुनावों में प्रथम बार महिलाओं ने मताधिकार का प्रयोग किया।

लोकतंत्र को दो भिन्न आयामों के जरिए ठीक तरीके से समझा जा सकता है– प्रक्रियात्मक (न्यूनवादी) और मौलिक (अधिकतावादी)। प्रक्रियात्मक आयाम अपना ध्यान केवल लोकतंत्र प्राप्ति की प्रक्रिया अथवा साधनों पर केन्द्रित करता है। इसका तर्क है कि सार्वजनीन व्यस्क

मताधिकार पर आधारित नियमित प्रतिस्पर्धी चुनाव और बहुत राजनीतिक सहभागिता के माध्यम से लोकतान्त्रिक रूप से चयनित सरकार बनती है।

वास्तविक लोकतंत्र प्रक्रियात्मक लोकतंत्र की कमी को दूर करने का प्रयास करता है, इसका मानना है कि सामाजिक ओर आर्थिक असमानता लोकतान्त्रिक प्रक्रिया में जनसहभागिता में बाधा हो सकती है। शासन करने के बजाय, वास्वतिवक अर्थों में यह अपना ध्यान सामाजिक समानता जैसे परिणामों पर केन्द्रित करता है। एक अर्थ में, यह सीमित लोगों के हित के बजाय सामान्य-हित की बात रकता है। पुनर्वितरणात्मक न्याय के माध्यम से वांछित वर्ग यथा–महिलाओं और गरीबों के अधिकारों की रक्षा की जा सकती है और ऐसी परिस्थिति का निर्माण राज्य द्वारा हस्तक्षेप के माध्यम से ऐसे वर्गों की राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करके की जा सकती है।

लोकतन्त्र शब्द प्रायः "उदारवादी लोकतन्त्र" (liberal democracy) के नाम से जाना जाता है, जिसमें प्रतिनिधियों की निर्णय लेने की क्षमता कानून के शासन का विषय है और जो सामान्यतः एक संविधान द्वारा संचालित की जाती है, जो व्यक्तियों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं का संरक्षण करता है। इसका उदारवादी चरित्र सरकार के ऊपर आंतरिक और बाहरी नियंत्रण के संजाल में प्रदर्शित होता है जिसका निर्माण स्वतंत्रता की गारंटी तथा राज्य के विरूद्ध नागरिकों का संरक्षण करने के लिए होता है। इसकी लोकतान्त्रिक विशेषताएँ हैं कि नियमित और प्रतियोगी चुनावों की व्यवस्था होती है, जो सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार और राजनीतिक समानता के आधार पर निश्चित होते है। उदारवादी लोकतन्त्र की प्रमुख विशेषताएँ निम्न प्रकार से हैं:

- औपचारिक, प्रायः विधि नियमों पर आधारित संवैधानिक सरकार
- संविधान के द्वारा नागरिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत अधिकारों की गारन्टी
- संस्थागत विकेन्द्रीकरण और नियंत्रण तथा संतुलन की व्यवस्था
- एक व्यक्ति; एक मत और सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के सिद्धान्तों पर आधारित नियमित चुनाव
- निर्वाचन के तरीके और पार्टी प्रतियोगिता के स्वरूप में राजनीतिक बहुलवाद।
- एक अच्छा नागरिक समाज, जिसमें विभिन्न संगठित समूह और हित सरकार से स्वतंत्र हो।
- बाजार व्यवस्था पर आधारित पूँजीवादी अथवा निजी उद्योग अर्थव्यवस्था।

उपर्युक्त बिन्दुओं में *अंतिम* बिन्दु आर्थिक विकास के संदर्भ में महत्वपूर्ण है, क्योंकि पूँजीवादी में आर्थिक व्यवस्था और सिद्धान्त उत्पादन के संसाधनों के निजी स्वामित्व और लाभ प्राप्त करने के लिए संचालित होते हैं। पूँजीवादी बाजार अर्थव्यवस्था में निर्णय लेना और निवेश करना, यह सब वित्तीय और पूँजी बाजार में उत्पादन के साधनों के स्वामित्व वाले पूँजीपतियों के द्वारा निश्चित होता है, जबकि वस्तुओं और सेवाओं के वितरण का मुख्य रूप से निर्धारण वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य और बाजार की प्रतियोगिता के द्वारा निर्धारित होता है। उदारवादी लोकतान्त्रिक व्यवस्था में आर्थिक स्वतंत्रता आर्थिक विकास अथवा प्रति व्यक्ति आय को उन्नत बनाती है।

11.2.2 आर्थिक विकास

आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है, जिसमें समय के साथ राष्ट्र की सम्पत्ति में वृद्धि होती है। आर्थिक शब्दों में, यह एक अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं के बाजार मूल्यों में एक

समयावधि के दौरान वृद्धि होती है। दीर्घकालीन स्थिति में, राष्ट्रीय आय को आर्थिक विकास बढ़ाता है और देश में रोज़गार दर में वृद्धि होती है, जिसके माध्यम से जीवन स्तर में सुधार होता है। यहाँ पर आर्थिक विकास तथा आर्थिक उन्नति के बीच अन्तर करना चाहिए। उन्नति लोगों को निम्न जीवन स्तर से निकालती है, और उनको रोज़गार तथा आवास की व्यवस्था करने में सहायता करती है। यह स्थिरता के मुद्दे पर भी विचार करती है, जिसमें भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता किए बिना वर्तमान की आवश्यकता की पूर्ति करती है। दूसरी ओर, आर्थिक विकास प्रदूषण और भीड़-भाड़ के मुद्दे का कारण बनता है, जिसमें स्थिरता (sustainability) का मुद्दा सम्मिलित नहीं होता है। आर्थिक विकास को प्रभावित करने वाले कुछ कारकों को नीचे स्पष्ट किया गया है:

- **प्राकृतिक संसाधन:** एक देश के प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा कितनी है, यह आंकलन आर्थिक विकास को निर्धारित करता है। पश्चिम एशिया के देशों में व्यापक तेल के भण्डार मौजूद हैं, जिसे बेचने से उनके आर्थिक विकास को गति मिली है।

- **आधारिक संरचना (Infrastructure)**: आधारिक भौतिक और संगठनात्मक संरचनाएँ आर्थिक विकास में सहायक सिद्ध होती हैं। जिन देशों में सड़क तथा रेल का संजाल उपलब्ध है, उसमें सामान एक जगह से दूसरी पर ले जाना सस्ता होगा, उन देशों की तुलना में जहाँ ऐसी सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं।

- **श्रम :** श्रम की उपलब्धि एक चुनौती और अवसरों दोनों है। ज्यादा कार्य बल आर्थिक विकास में सहायता करता है, किन्तु इस श्रम को कौशलों की भी उतनी ही आवश्यकता होती है।

- **प्रौद्योगिकी :** यह उत्पादकता में वृद्धि करती है तथा लागत को भी कम करती है।

- **राजनीतिक स्थिरता**: जिस देश में राजनीतिक स्थिरता नहीं है वहाँ पूँजी नहीं टिकती तथा निवेशक एक ऐसी अर्थव्यवस्था में पैसा नहीं लगाएँगे, जिसके पास राजनीतिक दिशा की कमी होती है।

संपूर्ण इतिहास में, *लोकतन्त्र, आर्थिक विकास और उन्नति* एक-दूसरे से सम्बन्धित रहे हैं राजनीतिक लोकतन्त्र और आर्थिक विकास के बीच का सम्बन्ध, पिछले पचास वर्षों से वाद-विवाद का केन्द्र बना हुआ है। सबसे पहले सन् 1950 के दशक और सन् 1960 के दशक में एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के अविकसित देशों पर वादविवाद रहा। औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र होने के बाद, इन देशों ने अपना प्राथमिक उद्देश्य लोकतान्त्रिक व्यवस्था को स्थापित करने का रखा था। हालाँकि, बहुत जल्द, इन देशों में से अधिकतर देशों ने तानाशाही व्यवस्था को अपना लिया था चाहे वह पाकिस्तान, म्यामार, इंडोनेशिया, ताईवान, सिंगापुर, नाइज़ेरिया और क्यूबा इत्यादि हो। विकास और जीवित रहने की आवश्यकता ने इन देशों को राजनीतिक विपक्ष को कुचलने के लिए मजबूर किया। साथ ही, उन्होंने अपने नागरिकों की नागरिक और राजनीतिक स्वतंत्रता को भी समाप्त कर दिया। यह एक मूल मुद्दे को उठाती है कि पहले लोकतन्त्र व्यवस्था हो या फिर आर्थिक विकास। दूसरे शब्दों में, हमको किस को प्राथमिकता देनी चाहिए – नागरिक, राजनीतिक स्वतंत्रता, अधिकार, लोकतान्त्रिक स्वतंत्रता एवं सरकार स्थापित करने के लिए, नागरिकों से सहमति लेना या गरीबी, निरक्षरता और लोगों की बदहाली को एक सत्ताधारी शासन के द्वारा समाप्त करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इस पर दो विभिन्न विचार हैं। एक मत कहता है कि लोकतन्त्र और आर्थिक विकास एक-दूसरे के अनुरूप नहीं हैं जबकि दूसरे पक्ष का मानना है कि ये दोनों एक-दूसरे के अनुरूप हैं।

11.3 लोकतन्त्र और आर्थिक विकास एक-दूसरे के अनुरूप नहीं हैं

कुछ ऐसे विशेषज्ञ हैं, जो यह विश्वास करते हैं कि आर्थिक विकास के लिए लोकतन्त्र एक अच्छी व्यवस्था नहीं हो सकती है। *रावर्ट बारो* ने इस क्षेत्र में एक लाभदायक अनुसंधान किया है, जिसमें उन्होंने निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि "अधिक राजनीतिक अधिकार आर्थिक विकास पर प्रभाव नहीं डालते हैं ... इसका प्रथम पाठ यह कि लोकतन्त्र आर्थिक विकास की चाबी नहीं है।" *जज पोसनर* के अनुसार, तानाशाही बहुत ही गरीब देशों के लिए प्रायः श्रेष्ठतम व्यवस्था होती है। इस तरह के देशों की साधारण अर्थव्यवस्था ही नहीं होती है, बल्कि लोकतन्त्र के लिए सांस्कृतिक और संस्थागत पूर्व शर्तों की भी कमी होती है। हालाँकि, आर्थिक विकास के *उच्च स्तर* पर, लोकतन्त्र की व्यवस्था आर्थिक उन्नति को प्रोत्साहित करने में बेहतर काम करेगी, अलोकतांत्रिक व्यवस्था की तुलना में। बारो के अनुसार, "लोकतन्त्र का मध्यम स्तर विकास के सर्वाधिक पक्ष में है, निम्नतम स्तर दूसरे नंबर पर आता है और उच्चतम स्तर तीसरे स्थान पर रखा गया है।" एड्म प्रज़ेवर्स्की और लिमोंगी (*Adam Prezeworski* and *Limongi*) ने सन् 1950 से 1991 तक बहुत सारे देशों का विश्लेषण किया है और निष्कर्ष निकाला है कि एक लोकतान्त्रिक देश, जिसमें लोगों की प्रति व्यक्ति आय 1500 डॉलर से कम है, उस देश में लोकतन्त्र की सत्ता की अवधि आठ वर्ष की होगी। जिस देश की प्रति व्यक्ति आय 1500–3000 डॉलर के बीच होगी, उस देश में लोकतन्त्र 18 वर्ष तक चल सकता है तथा जिस देश में प्रति व्यक्ति आय 6000 डॉलर से अधिक होगी, उस देश में लोकतन्त्र की व्यवस्था स्थायी बनी रहेगी। लोकतान्त्रिक देशों का लगभग *दो-तिहाई* देश, जिनकी प्रति व्यक्ति आय 9000 डॉलर है, उन देशों का लोकतन्त्र सबसे अधिक स्थायी है। *एस.एम. लिपसेट* ने भी अपने विचार इन्हीं के समान प्रस्तुत किए हैं, उनका विश्वास है कि एक राष्ट्र जितना बेहतर होगा वहाँ लोकतान्त्रिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए अधिक अवसर उपलब्ध होंगे।

लोकतान्त्रिक और ग़ैर-लोकतान्त्रिक, *दोनों* तरह की व्यवस्थाएँ आर्थिक उन्नति पर लाभकारी अथवा हानिकारक प्रभाव डाल सकती हैं। आर्थिक उन्नति के लिए *तीन* प्रकार की स्थिरता जरूरी है – स्वामित्व स्थिरता (सम्पत्ति के अधिकार की स्थायी व्यवस्था), कानूनी स्थिरता (विधि का शासन) और सामाजिक स्थिरता (सामाजिक अशांति का न होना)। ये सब आर्थिक उन्नति के लिए आवश्यक शर्तें हैं, यद्यपि पर्याप्त शर्त कोई भी नहीं है। इस तरह की सभी शर्तें लोकतान्त्रिक अथवा ग़ैर-लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं में मौजूद हो सकती हैं और आर्थिक उन्नति में सहायक हो सकती हैं। इसके साथ ही, आर्थिक उन्नति भी लोकतन्त्र और सत्ताधारी राज्यों पर अपना प्रभाव डाल सकती है। आर्थिक संकट किसी भी सरकार को गिरा सकता है। ए. प्रज़ेवर्स्की एवं अन्य के अनुसार, गरीबी की स्थिति लोकतान्त्रिक सरकार का कभी भी ध्वंस कर सकती हैं। यहाँ तक कि तानाशाही शासन भी संकट में होते हैं; यह सब हम अरब स्प्रिंग के सम्बन्ध में देख सकते हैं, जब 2011 में अनेक अरब देशों की शासन व्यवस्था चरमरा गई थी।

पूर्वी एशियाई राष्ट्रों के संदर्भ में मुख्य रूप से एक तर्क प्रस्तुत किया जाता है, कि उन्होंने लोकतन्त्र की बजाय आर्थिक विकास को तरजीह दी है। इस आंकलन का मुख्य कारण है कि विकास के लिए परिवर्तन की जरूरत होती है, और यह परिवर्तन कुछ मतदाताओं पर विपरीत प्रभाव डालता है। इसलिए, ऐसी सरकारें जो आगामी चुनावों में चुनावी सहायता पर निर्भर करती हैं, वे आमतौर पर ऐसे फैसले नहीं लेंगी जो मतदाताओं के एक बड़े वर्ग पर विपत्ति डालेंगी। उदाहरण के लिए सिंगापुर और सुधार के बाद के चीन और ताईवान ने उच्च विकास के स्तर को प्राप्त किया है। जबकि भारत जैसे लोकतान्त्रिक देशों में यह सब

संभव नहीं हुआ है। इसे "ली हाईपोथिसि" (Lee Hypothesis) कहते हैं कि, जिसे सिंगापुर के पूर्व प्रधानमंत्री, ली कुवान यू ने विकसित किया था। ली कुवान यू का मानना है कि किसी भी राजनीतिक व्यवस्था की अंतिम परीक्षा यह होती है कि क्या वह व्यवस्था बहुसंख्यक लोगों के जीवन स्तर में सुधार करने में सक्षम हैं। इस सिद्धान्त का मानना है कि राजनीतिक और नागरिक अधिकारों की वरीयता बाद की है जबकि आर्थिक अधिकार सबसे पहले आते हैं। यदि लोगों से राजनीतिक स्वतंत्रता और उनकी आर्थिक आवश्यकताओं के बीच उनकी पसंद पूछी जाए, तो लोग अपने आर्थिक संकटों तथा वंचित स्थिति को दूर करने के लिए बिना किसी हिचक के वे विकास को सबसे पहले वरीयता या प्राथमिकता देंगे। वे लोग लोकतन्त्र की बिल्कुल चिन्ता नहीं करेंगे। इसके अतिरिक्त, ली थीसिस के समर्थकों के अनुसार, उदारवादी राजनीतिक स्वतंत्रता पश्चिमी संस्कृति की प्राथमिकता और जुनून है और सांस्कृतिक रूप से कुछ अन्य संस्कृतियों के ये अधिकार महत्वपूर्ण नहीं है, जैसे कि मध्य पूर्व और एशिया में। एशिया की संस्कृति में, *शासन* और *अनुशासन* को अधिक महत्व दिया जाता है, जिनसे वैभव प्राप्त होता है। जैसे कि ली कुवान अपने विचार व्यक्त करते हैं कि *"मैं यह विश्वास नहीं करता हूँ कि लोकतन्त्र की वजह से आवश्यक रूप से उन्नति होती है। मैं यह विश्वास करता हूँ कि एक देश को विकसित होने के लिए लोकतंत्र से ज्यादा अनुशासन की जरूरत है।* यह ध्यान रहे कि तथाकथित एशियाई टाइगर अर्थव्यवस्थाओं ने जिन व्यवस्थाओं का अनुपालन किया है, वे लोकतन्त्र से कोसों दूर रही हैं, यहाँ तक कि तानाशाही व्यवस्था भी रही है। ली थीसिस को मानने वाले लोग पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के स्थान पर *क्षमता* और *स्थिरता* को अधिक महत्व देते हैं। उन्नति के लिए आवश्यक है कि निर्णायक नीतियाँ हों और उन्नति उनको प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने की नितांत आवश्यकता होती है।

सत्ताधारी अथवा तानाशाही शासन नीति लागू करने में अत्यधिक निर्णायक और प्रभावी कदम उठाते हैं। इसके साथ ही, संजातीय और उप-राष्ट्रीय संघर्ष आर्थिक उन्नति को प्रभावित करते हैं और बाधा डालते हैं और एक शक्तिशाली तानाशाही सरकार के द्वारा अत्यधिक प्रभावी रूप से इनका दमन किया जाता है।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) जे.एस. मिल के अनुसार लोकतान्त्रिक रूप से निर्णय लेने के क्या लाभ हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) आर्थिक विकास और आर्थिक उन्नति के बीच क्या अन्तर है?

.....

.....

.....

.....

3) ली थीसिस क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

11.4 लोकतन्त्र और आर्थिक विकास एक-दूसरे के अनुरूप हैं

सामान्यतया, यह विश्वास किया जाता है कि सत्ताधारी शासन की तुलना में, लोकतन्त्र आर्थिक विकास और सांस्कृतिक प्रगति दोनों के लिए बेहतर अवसर पैदा करता है। प्रगतिशील उन्नति के लिए जरूरी है ऐसे नीति विकल्प, जिनसे विकास के लाभ का वितरण ज्यादा से ज्यादा लोगों तक हो। लोकतान्त्रिक शासन लाभों के व्यापक रूप से वितरण में अधिक प्रभावी हैं, (क्योंकि सत्ताधारी शासन की शक्तिशाली प्रवृत्तियाँ होती हैं – जैसे लोगों से वसूलना (rent secking), शासकीय मंडलों की समृद्धि तथा बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार)। लोकतान्त्रिक सरकारें भ्रष्टाचार और किराया वसूलने जैसी नीतियों की कम इच्छुक होती हैं और वे लूटमार भी कम नहीं करती हैं। फिर भी, लोकतन्त्र और आर्थिक विकास के बीच आपसी सम्बन्ध पर सहमति नहीं है। मिल्टन फ्राइडमैन जैसे विद्वान यह विश्वास करते हैं, कि अधिकारों का उच्च स्तर आर्थिक विकास में सहायक होता है। अन्य अध्ययन सुझाव प्रस्तुत करते हैं कि लोकतन्त्र आर्थिक उदारीकरण और दीर्घावधि में जाकर सतत् विकास को उन्नत करते हैं। विश्व आर्थिक मंच के आंकलन के अनुसार, एक देश जो अलोकतान्त्रिक व्यवस्था से लोकतन्त्र में बदलता है, वह दीर्घावधि में 20 प्रतिशत ज्यादा सकल घरेलू उत्पाद प्राप्त होता है (लगभग अगले 30 वर्षों में)। ये व्यापक परन्तु अकल्पनीय प्रभाव नहीं है और इंगित करते हैं कि पिछले 50 वर्षों में लोकतंत्र की वैश्विक वृद्धि हुई है, जिसकी वजह से, विश्व सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 6 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं। इसके साथ ही आर्थिक सुधारों, निजी निवेश, सरकार का आकार और क्षमता तथा सामाजिक संघर्षों में कमी आना इत्यादि पर लोकतन्त्र का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। ये सब प्रणालियाँ हैं, जिनसे लोकतन्त्र आर्थिक विकास में वृद्धि कर सकता है।

नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन का तर्क है कि आर्थिक विकास के लिए लोकतन्त्र एक *पूर्व शर्त* है। वे विश्वास करते हैं कि ली हाइपोथीसिस विकीर्ण अनुभववाद (sporadic empiricism) पर आधारित है, जो किसी भी सामान्य सांख्यिकी जाँच, व्यापक उपलब्ध आँकड़ों के स्थान पर न होकर बहुत ही चयनित और सीमित सूचनाओं पर आधारित है। इस प्रकार के सामान्य सम्बन्ध बहुत ही चयनित साक्ष्यों के आधार पर स्थापित नहीं किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, हम सिंगापुर या चीन के उच्च आर्थिक विकास को "निश्चित साक्ष्य" (definitive proof) के रूप में नहीं ले सकते हैं कि सत्ताधारी शासन आर्थिक विकास को अच्छी तरह से उन्नत कर सकते हैं। इसके विपरीत, उदाहरण के लिए बोट्सवाना को ले सकते हैं, जिसने अफ्रीका में आर्थिक विकास का रिकार्ड बनाया है, जो वास्तव में आर्थिक विकास में विश्व के बड़े उदाहरणों में से एक है और यह सब इस देश में लोकतन्त्र के कारण सम्पन्न हुआ है। हमें दावों और प्रतिदावों को हल करने के लिए अधिक प्रयोगसिद्ध व्यवस्थित अध्ययन की आवश्यकता है।" सेन आगे कहते हैं कि "जिन आर्थिक नीतियों और समुचित वातावरण की वजह से पूर्वी एशिया के देशों में आर्थिक सफलता आई इन मुख्य कारणों को अब सबने समझ लिया है। जबकि विभिन्न प्रयोगसिद्ध

अध्ययन इस विषय पर विभिन्न मत रखते हैं, किन्तु इस बात पर सहमति है कि महत्वपूर्ण "सहायक नीतियों" की एक सूची है, जिनके कारण इन देशों को आर्थिक सफलता प्राप्त हुई है, इसमें कुछ महत्वपूर्ण तत्व शामिल हैं जैसे कि प्रतिस्पर्धा का खुलापन, अंतर्राष्ट्रीय बाजार का प्रयोग, निवेश और निर्यात के लिए प्रोत्साहित करने के सार्वजनिक प्रावधान, साक्षरता और विद्यालयी व्यवस्था का उच्च स्तर, सफल भूमि सुधारों की व्यवस्था और अन्य सामाजिक अवसरों की प्रचुरता जो आर्थिक विस्तार की प्रक्रिया में व्यापक भागीदारी बढ़ाते हैं। ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है कि इस प्रकार की नीतियाँ महान लोकतन्त्र में असंगत है और इन्हें बनाए रखने के लिए तानाशाही तत्वों की जरूरत पड़ेगी, जैसे दक्षिण कोरिया, सिंगापुर अथवा चीन में हुआ। वास्तव में, यह साबित करने के लिए साक्ष्य हैं कि तीव्र आर्थिक विकास उत्पन्न करने के लिए अनुकूल आर्थिक वातावरण चाहिए न कि कठोर राजनीतिक व्यवस्था। सेन आगे तर्क प्रस्तुत करते हैं कि विश्व में अकाल का भयानक इतिहास रहा है, परन्तु प्रासंगिक स्वतंत्र प्रेस वाले किसी भी स्वतंत्र और लोकतान्त्रिक देश में अकाल कभी नहीं पड़ा है।" यद्यपि चीन भारत की तुलना में, आर्थिक रूप से बेहतर प्रदर्शन कर रहा है, फिर भी, चीन में अकाल पड़ा, जोकि विश्व इतिहास में का सबसे बड़ा अकाल है। 1958-61 के दौरान, लगभग 30 मिलियन लोगों की अकाल के कारण मृत्यु हुई। जबकि देखने में यह आया है कि दोषपूर्ण सरकारी नीतियाँ अगले तीन वर्ष तक वैसी ही बनी रही, उनको सुधारने का कार्य बिल्कुल नहीं हुआ। इन दोषपूर्ण नीतियों का किसी ने भी विरोध नहीं किया और न ही उनकी किसी प्रकार से आलोचना की गई क्योंकि संसद में प्रतिपक्ष नहीं था और स्वतंत्र प्रेस नहीं था और न ही बहुदलीय चुनाव व्यवस्था थी।

सेन अपनी पुस्तक, *डेवलेपमेंट एज़ फ्रीडम* में तर्क प्रस्तुत करते हैं कि वास्तविक विकास मूल आय में सामान्य वृद्धि या प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि से नहीं किया जा सकता है। बल्कि, इसके लिए अतिव्यापी प्रावधानों की जरूरत है जो बढ़ती हुई स्वतंत्रताओं के उपयोग को सक्षम बनाएँ।

तानाशाही व्यवस्था अपने नागरिकों का स्वतंत्रता प्रदान नहीं करती है, इसलिए उन्नति और आर्थिक विकास जैसे व्यापक मुद्दों पर उनकी समझ सीमित होती है। आर्थिक विकास का वास्तविक अर्थों में प्राप्त करना, केवल लोकतान्त्रिक संरचना में ही संभव है, जहाँ पर राजनीतिक और नागरिक स्वतंत्रता को पर्याप्त स्थान उपलब्ध होता है। जोकि लोगों के मूल्यों और उनकी आवश्यकताओं का गठन करने में सहायक होते हैं। इसके द्वारा बहुविध संस्थानों को उद्‌गम और विस्तार का अवसर दिया जाता है जैसे कि विधि रचनातंत्र, बाजार की संरचना, शिक्षा, स्वास्थ्य, उत्तरदायित्व की भावना इत्यादि जो मानव स्वतंत्रता और उसकी क्षमताओं का संरक्षण करने में सहायक होते हैं।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) अमर्त्य सेन की संकल्पना, "स्वतंत्रता के रूप में विकास" क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

11.5 सारांश

विगत वर्षों में, काफी प्रयोगसिद्ध अध्ययन हुए हैं जिनमें लोकतन्त्र और आर्थिक उन्नति के बीच सम्बन्धों की छानबीन करने का व्यापक प्रयास किया गया है। हालाँकि, यह प्रयोगसिद्ध स्थिति सांकेतिक और अनिर्णायक है। कुछ आँकड़े अनुरूप सिद्धान्त के पक्ष में हैं कि लोकतन्त्र आर्थिक उन्नति पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। हालाँकि, यह प्रयोगसिद्ध मिलान बहुत कमजोर हैं तथा दोनों दिशाओं में प्रतिरोधी उदाहरणों की संख्या काफी है: तानाशाही या सत्ताधारी शासन जिनका विकास में अच्छा रिकार्ड मौजूद है और लोकतान्त्रिक शासन जिनका विकास में रिकार्ड बहुत कमजोर है। वास्तव में, आर्थिक विकास के लिए राजनीतिक स्थिरता जरूरी है न कि एक विशेष प्रकार की राजनीतिक संस्था। कोई भी राजनीतिक संस्थान जब तक वह स्थिर बना रहता है, विकास को उन्नत करता रहेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि विकास को राजनीतिक अस्थिरता से खतरा है। पिछले हाल के वर्षों में यह देखा गया है कि लोकतन्त्र व्यवस्था में लगातार हड़तालों, प्रदर्शनों, दंगों की भरमार रही है जबकि तानाशाही व्यवस्था में इस तरह की कोई भी घटनाएँ कम होती हैं। तानाशाही व्यवस्था में, जन शासक के शासन को खतरा होता है, तो विकास की गति धीमी हो जाती है। विभिन्न प्रकार की राजनीतिक और सामाजिक अशांति के दौरान भी ऐसा ही होता है। जब कभी भी सरकार को खतरा होता है या कुछ बदलाव किए जाते हैं, लोग सरकार के खिलाफ प्रदर्शन शुरु कर देते हैं। इससे अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। लोकतन्त्र के अंतर्गत इस प्रकार की घटनाएँ कम होती हैं, क्योंकि लोकतन्त्र संस्थाओं के माध्यम से संचालित होता है न कि किसी व्यक्ति द्वारा। यहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि समय आने पर सरकार बदल जाएगी और जब वे यह जानते हैं कि वे उसी तरीके से अपना विरोध कर पा रहे हैं, इसलिए ज्यादातर लोग प्रदर्शन नहीं करते हैं।

लोकतन्त्र आर्थिक विकास को लम्बे समय में स्थिरता और सतत्ता देता है, जबकि तानाशाही राज्यों के बारे में यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है। हम देख सकते हैं कि 1917 की रूसी क्रांति के बाद सोवियत संघ में क्या घटनाएँ घटी हैं। जबकि आरंभ में सोवियत संघ की अर्थव्यवस्था अच्छी थी, धीरे-धीरे उसमें बाधाएँ आने लगीं, जिन्होंने 1991 में सोवियत विघटन में अपना योगदान दिया। तानाशाही शासनों में प्रकृति को हानि पहुँचाने की प्रवृत्तियाँ होती हैं और वे विकास के लिए वातावरण नष्ट करने लगती हैं। सोवियत संघ ने मध्य एशिया में बांधों जैसे व्यापक परियोजनाओं को संचालित किया था परन्तु आज मध्य एशिया की पारिस्थितिकी (ecology) नष्ट होने के करीब पहुँच गई है क्योंकि सोवियत संघ द्वारा आवश्यकता से अधिक उनका दोहन किया गया, जिससे वहाँ की स्थिति बद से बदतर हो गई। अरब सागर की खराब हालत इसका एक उदाहरण है। चीन भी इसी प्रकार से अपना कार्य कर रहा है, और उसने आज लगभग 90,000 बाँधों का निर्माण किया है। इतने बाँध बनाने के लिए मानव अधिकारों का हनन हुआ है। शशी थरूर ने चीन और भारत के विकास मॉडल की समीक्षा हमारे समक्ष रखी है। वे कहते हैं कि चीन का आर्थिक विकास खतरनाक गति से हुआ है परन्तु, इस विकास ने मानवीय मूल्यों की बलि दी है जैसे – जनसंख्या विस्थापन, किसानों से उनकी भूमि को छीन लिया गया, बाँधों के कारण गाँवों का बह जाना, बढ़ता प्रदूषण, मानव अधिकारों की अनदेखी और सरकार द्वारा शक्ति के दुरुपयोग पर मामूली नियंत्रण। दक्षिणी कोरियाई, ताईवानी, सिंगापुरी और अभी हाल के चीन के अनुभव ली थीसीस के लिए साक्ष्य हमको उपलब्ध कराते हैं। हालाँकि, राजनीतिक शासनों के प्रभाव का आंकलन करने के लिए उनके संपूर्ण रिकार्ड की जाँच करनी चाहिए न कि कुछेक देशों का, जो अच्छे परिणाम दे रहे हैं। सी. एच न्यूटसेन के विश्लेषण में ली थीसिस के लिए कुछ साक्ष्य नहीं मिले हैं यहाँ तक कि एशिया में भी नहीं।

उन्होंने एशिया के 21 देशों के प्राप्त आँकड़ों का प्रयोग किया, परन्तु उन्हें आर्थिक विकास पर तानाशाही शासकों का कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं मिला, चाहे किसी भी समयावधि की जाँच की गई हो।

11.6 संदर्भ

एकमोगलू, डी. (2013), "डज़ डेमोक्रेसी बूस्ट इकोनॉमिक ग्रोथ", डब्ल्यू.ई.एफ. रिपोर्ट, URL: https:/www.weForum.org/agenda/2014/05democracy_boost_economic_growth

गैंग, गुओ (1998), "डेमोक्रेसी ऑर नॉन-डेमोक्रेसी, फ्रॉम दि पर्सपेक्टिव ऑफ इकॉनामिक डेवलेपमेंट, URL: http://home.demiss.edu/_gg/paperhtm/dmcrecnm.htm

क्यूटसेन, सी. एच. (2010), "इन्वेस्टीगेटिंग दि ली थीसिसः हाऊ बैड इज़ डेमोक्रेसी फॉर एषियन इकॉनामिक्स?" *यूरोपियन पॉलिटीकल साइंस रिव्यू,* 2-3, 457-473।

लिपसेट, सीमौर मार्टिन (1959), "सम सोशल रिक्वुजिट्स ऑफ डेमोक्रेसीः इकानामिक डेवलेपमेंट एंड पॉलिटिकल लेजीटीमेसी", *अमेरिकन पॉलिटीकल साइंस रिव्यू,* खण्ड 53, अंक 69, पृ. 105।

प्रज़ेवर्सकी, एड्म, एवं फर्नांडो लोमोंगी. (1993) "पालिटिकल रीजिम्स एंड इकॉनॉमिक ग्रोथ", *जर्नल ऑफ इकॉनामिक पर्सपेक्टिव्ज,* खण्ड 7, अंक 3, पृ. 51-69।

प्रजेवर्सकी एड्म, माईकल अल्वारेज, जोस एंटोनियो चीबब एवं फर्नाड़ोलीमोंगी (1996), वाट मैक्स डेमोक्रेसी इंडूर?" *"जर्नल ऑफ डेमोक्रेसी,* खण्ड 7, अंक 1, पृ. 39-55।

सेन अमर्त्य (1999), *डेवलेपमेंट एज फ्रीडम,* ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

11.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तीन लाभों पर प्रकाश डालिएः
   - उत्तरदायित्व की अनुमति
   - विभिन्न प्रकार के विचारों में से सबसे श्रेष्ठ विचार सुनिश्चित किया जाता है।
   - नागरिकों का चरित्र निर्माण करता है।
2) आर्थिक उन्नति सतत् विकास करती है, पर आर्थिक विकास ऐसा नहीं करता।
3) ली थीसिस लोकतन्त्र की कीमत पर आर्थिक विकास को महत्व देता है, यह अनुशासन को भी महत्व देता है।

बोध प्रश्न 2

1) वास्तविक विकास मूल आय या प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि नहीं है, बल्कि इसके लिए अति व्यापी प्रावधानों की जरूरत है, जो बढ़ती हुई स्वतंत्रताओं के उपयोग को सक्षम बनाएँ।

इकाई 12 स्वतंत्रता बनाम नियंत्रण*

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 परिचय

12.2 स्वतंत्रता का अर्थ

12.2.1 स्वतंत्रता पर जे. एस. मिल के विचार

12.3 नियंत्रण (सेन्सरशिप) की अवधारणा

12.4 स्वतंत्रता और नियंत्रण के बीच संबंध

12.5 सारांश

12.6 संदर्भ

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप स्वतंत्रता और नियंत्रण की संकल्पनाओं का पता लगाएंगे और साथ ही, यह भी जानेंगे वे कैसे एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, आपको निम्नलिखित में सक्षम होना चाहिए:

- स्वतंत्रता और नियंत्रण के अर्थ की व्याख्या करें; तथा
- उनके संबंधों को समझें।

12.1 परिचय

स्वतंत्रता को एक प्रतिष्ठित राजनीतिक मूल्य के रूप में बहुत से लोग मानते हैं और शुरुआत से ही मनुष्य तथा राज्य दोनों अपने-अपने हिस्से की स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए प्रयासरत रहे हैं। स्वतंत्रता एक आवश्यक शर्त हैं, इसके बिना न तो राज्य और न ही व्यक्ति कोई प्रगति कर सकता है। इतिहास उन अभिलेखों से भरा है, जहां स्वतंत्रता के अपने हिस्से को सुनिश्चित करने और विस्तार करने के लिए व्यक्तियों और राज्यों के बीच संघर्ष देखा जा सकता है। लगभग हर कोई इस बात से सहमत प्रतीत होता हैं कि व्यक्ति की स्वतंत्रता महत्वपूर्ण है और राज्य द्वारा समग्र विकास के लिए अभूतपूर्व कानूनी सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए। लेकिन साथ ही राजनीतिक वैज्ञानिकों वकीलों राजनीतिक नेताओं और नागरिकों के बीच इन बातों को लेकर व्यापक मतभेद हैं जैसे– स्वयं स्वतंत्रता की अवधारणा को लेकर तथा एक व्यवस्थित राज्य में कितनी स्वतंत्रता स्वीकार्य हैं। राज्य नागरिक हितों की रक्षा के लिए, एक उपकरण के रूप में 'नियंत्रण' (सेंसरशिप) का इस्तेमाल करता है। कुछ मामलों में भ्रामक, झूठी या घृणित बातों से भी व्यक्तियों की गरिमा की रक्षा राज्य करता है। यह माना जाता है कि लोकतंत्र में सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए 'तर्कसंगत प्रतिबंध' महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि ऐसे विद्ववान हैं जो तर्क देते हैं कि राज्य द्वारा 'नियंत्रण' का विकास, व्यक्तिगत स्वतंत्रता में अवरोध उत्पन्न करने के लिए किया गया है तथा इसका उपयोग राज्य अपनी शक्ति को बनाए रखने के लिए करता है। सभी राजनीतिक संस्कृतियों में 'नियंत्रण' विभिन्न स्तर पर पाया जाता है और इसका स्रोत राजनीतिक, सामाजिक, कानूनी या सांस्कृतिक हो सकता है।

*डॉ. शालिनी गुप्ता, असिस्टेंट प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय

इस इकाई में हम कुछ जटिल प्रश्नों को समझने की कोशिश करेगे, जैसे– क्या लोकतांत्रिक समाज में भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर सीमाएं बाधंना अनिवार्य हैं? भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को किस हद तक 'उचित' माना जाना चाहिए तथा कौन तय करेगा कि क्या उचित है? हम यह समझने का भी प्रयास करेंगे कि किस परिस्थिति में 'नियंत्रण' को उचित ठहराया जा सकता है और क्या इससे हितों के संघर्ष की स्थिति में बढोत्तरी होती है? 'सार्वजनिक अच्छाई' में कार्य करने हेतु, राज्य के पास वैध रूप से नियंत्रण का उपयोग करने के लिए कितनी शक्ति है? तथा उन प्रतिबन्धों के बीच अंतर कैसे करें। एक तरफ जो दमनकारी उद्देश्यों हेतु और दूसरे जो 'कानूनी रूप से स्वीकार्यता' हेतु उपयोग किए जाते हैं।

अंत में, हम उन परिस्थितियों पर भी विचार करेंगे जिसमें 'नियंत्रण' के दमनकारी उपयोग के परिणामस्वरूप अधिकारों का उल्लंघन हुआ हो तथा तब व्यक्तियों के द्वारा राज्य के खिलाफ क्या कार्यवाही हो।

12.2 स्वतंत्रता का अर्थ

स्वतंत्रता की अवधारणा जटिल है और इसका प्रयोग अलग-अलग समय पर भिन्न-भिन्न अर्थों में हुआ हैं। इसे अक्सर 'आजादी' शब्द के सन्दर्भ में एक-दूसरे के लिए प्रयोग किया जाता है और दोनों को एक-दूसरे के समानार्थी माना जाता है। यद्यपि कुछ विद्वान हैं जो 'आजादी' और 'स्वतंत्रता' के बीच भेद करते हैं वे तर्क देते हैं कि 'स्वतंत्रता' राजनीतिक या कानूनी आजादी को प्रदर्शित करती हैं, जबकि 'आजादी' व्यक्ति की क्षमता के अन्तर्गत गतिविधियों की एक बड़ी श्रेणी शामिल करती है, जिसे वो अपनी इच्छा के अनुसार बिना किसी बाहरी दबाव के कर सकता है। इस इकाई में, दोनों के बीच के भेद पर चर्चा नहीं की गई हैं तथा दोनों को एक-दूसरे के लिए उपयोग किया गया हैं। 'लिबर्टी' (स्वतंत्रता) शब्द लैटिन शब्द 'लिबरल' से लिया गया हैं, जिसका अर्थ हैं कि सभी प्रकार के प्रतिबंधों (अंकुष) की अनुपस्थिति । इस अर्थ में, स्वतंत्रता का मतलब है कि किसी को भी बिना बाहरी अवरोध के अपनी पसंद के हिसाब से चयन करने का अधिकार है। जी.डी.एच कोल ने स्वंतत्रता की अवधारणा को स्पष्ट रूप से बताते हुए कहा कि 'व्यक्ति की स्वतंत्रता, व्यक्तित्व को बाहरी बाधाओं के बिना व्यक्त करने की स्वतंत्रता हैं'। यद्यपि व्यवस्थित समाज में असीम स्वतंत्रता का अस्तित्व नहीं हो सकता है, जैसे कि मैककेनी ने तर्क दिया कि 'स्वतंत्रता सभी प्रकार के नियंत्रण की अनुपस्थिति नहीं हैं, यह तर्कहीन नियंत्रण की जगह तार्किक नियंत्रण को दर्शाती है। महात्मा गांधी ने भी स्वतंत्रता की ऐसी ही परिभाषा दी। उनके अनुसार "स्वतंत्रता का मतलब प्रतिबंध की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि यह व्यक्त्वि के विकास में निहित हैं"। जेराल्ड मैक्कलम का स्वतंत्रता के बारे में तर्क हैं कि "हमेशा कुछ का (कर्त्ता अथवा कर्त्ताओं), कुछ से, करना, नहीं करना, बनना अथवा कुछ नहीं बनना"। इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाएं यह स्पष्ट करती है कि 'आजादी' कुछ सीमाओं के साथ स्वतंत्रता है, लेकिन सवाल उठता है कि इन प्रतिबंधों, हस्तक्षेपों या बाधाओं का स्रोत क्या हैं तथा क्या किसी भी क्षेत्र में व्यक्तियों के लिए पूर्ण स्वतंत्रता की संभावना नहीं है ?

उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर सर आइज़िया बर्लिन ने अपने प्रसिद्ध निबंध "टू कानसेप्ट आफ लिबर्टी" (1941)(स्वतंत्रता की दो अवधारणाएं) में दिए, जिसमें उन्होंने राज्य की भूमिका के आधार पर सकारात्मक स्वतंत्रता और नकारात्मक स्वतंत्रता के बीच अंतर बताया है। नकारात्मक स्वतंत्रता से तात्पर्य है कि राज्य द्वारा अनावश्यक हस्तक्षेप से स्वतंत्रत होना। इसका अभिप्राय यह हैं कि वो क्षेत्र जिसमें व्यक्ति को यानि स्त्री/पुरुष को जो पंसद है वो करने के लिए स्वतंत्र हो बिना दूसरों के द्वारा बाधा डाले हुए। बर्लिन के शब्दों में नकारात्मक

स्वतंत्रता की अवधारणा, इस प्रश्न के उत्तर में निहित हैं, कि "वह कौन सा क्षेत्र है जिसमें कर्त्ता–व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह– स्वतंत्र हैं या उन्हें स्वतंत्र रूप से छोड़ा जाना चाहिए जिसमें वे जो करने में सक्षम हो या कर रहे हों, वो बिना दूसरे व्यक्तियों के हस्तक्षेप के कर सके ?" बर्लिन के अनुसार सकारात्मक स्वतंत्रता इस सवाल का जवाब देने का प्रयास करती है कि "क्या या कौन नियंत्रण अथवा हस्तक्षेप का स्रोत है, जो किसी के करने को निर्धारित कर सकता है या यह करने की बजाय वह करना है ?" इस प्रकार सकारात्मक स्वतंत्रता का तात्पर्य 'तर्कसंगत आत्म' की स्वतंत्रता से है। रूसो और अन्य आदर्शवादियों का मानना था कि मनुष्य तार्किक प्राणी होता है और व्यक्तिगत स्वतंत्रता उस प्रक्रिया में भागीदारी के माध्यम से हासिल की जा सकती है, जिसमें किसी समुदाय के द्वारा अपने मामलों के ऊपर सामूहिक नियंत्रण का अभ्यास किया जाता है, जो कि "सामान्य इच्छा" के अनुरूप होता है, जो कि सभी लोगों की 'सद्इच्छा' का संश्लेषण था। इस प्रकार, सकारात्मक स्वतंत्रता किसी के जीवन के नियंत्रण से सम्बन्धित है। नकारात्मक स्वतंत्रता व्यक्ति को अकेले छोड़ देने के बारे में है, जबकि सकारात्मक स्वतंत्रता व्यक्ति (स्त्री/पुरुष) के व्यक्तित्व को विकसित करने की स्वतंत्रता से सम्बन्धित है। सकारात्मक स्वतंत्रता के लिए, राज्य को ऐसी स्थितियों का सृजन करना चाहिए जिसमें व्यक्ति अपनी क्षमता में वृद्धि, नैतिक विकास और आत्मबोध की प्राप्ति कर सके। जबकि, नकारात्मक स्वतंत्रता के सन्दर्भ में राज्य की कोई भूमिका नहीं होती है, क्योंकि व्यक्ति को अपने लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयास अपनी राष्ट्रीयता के अनुरूप करने हेतु अकेले छोड़ दिया जाना चाहिए। नकारात्मक स्वतंत्रता के प्रमुख समर्थकों में एडम स्मिथ, डेविड रिकार्डो (अहस्तक्षेप–नीति के प्रस्तावक), जान लाक, जे. बेंथम, एफ ए हायेक, राबर्ट नाजिक और आइज़िया बर्लिन शामिल हैं। सकारात्मक स्वतंत्रता के मुख्य समर्थकों में टी एच ग्रीन, एल टी हाब्हाउस, हेराल्ड लास्की, अर्नेस्ट बार्कर और सी बी मैकफर्सन शामिल हैं। जे एस मिल ने 'आत्म-संबंधित' तथा 'अन्य संबंधित' आचरण के बीच अन्तर किया। उन्होंने तर्क दिया कि 'आत्म-संबंधित' आचरण में हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन ने मानव क्षमता के विस्तार के रूप में स्वतंत्रता की व्यापक अवधारणा दी हैं। सेन अपनी पुस्तक, 'डेवल्पमेंट ऐज़ फ्रीडम्' (विकास स्वतंत्रता के रूप में) में कहते हैं कि "विकास को वास्तविक स्वतंत्रता के विस्तार की प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है जिसका लोग आनंद करते हैं। मानव स्वतंत्रताओं पर ध्यान केन्द्रित करना विकास के संकुचित विचारों के साथ विरोधाभास पैदा करता है, जैसे कि सकल राष्ट्रीय उत्पाद या व्यक्तिगत आय में वृद्धि या औद्योगीकरण या तकनीकी प्रगति या समाजिक आधुनिकीकरण"। उन्होंने आगे कहा कि विकास के द्वारा स्वतंत्रता विरोधी प्रमुख स्रोतों को हटाने की आवश्यकता हैः गरीबी के साथ-साथ अत्याचार, अपर्याप्त आर्थिक अवसरों के साथ-साथ व्यवस्थित सामाजिक वंचितता, सार्वजनिक सुविधाओं की उपेक्षा के साथ-साथ असहिष्णुता या दमनकारी राज्य की अधिकाधिक गतिविधियां।

प्रांरभिक उदारवाद, व्यक्तिवाद के दर्शन के साथ जुड़ा हुआ है। विश्वास यह था कि रूढ़िवाद, अज्ञानता और सांमतवाद के खिलाफ लड़ाई व्यक्तिगत पहल से शुरू होगी। यह एक स्वायत्त और तर्कसंगत व्यक्ति की धारणा पर आधारित था। इसने तर्क दिए कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए। राजनीतिक स्तर पर, राज्य की स्वेच्छाचारी शक्ति पर प्रतिबंध के लिए तर्क दिए। आर्थिक पहलुओं में, नकारात्मक स्वतंत्रता ने 'अहस्तक्षेप की नीति' का अनुसरण किया। व्यक्तिगत स्तर पर, इसने राज्य और समाज से व्यक्तिगत मामलों में स्वतंत्रता मांगी। थामस हाब्स ने स्वतंत्रता को 'कानून की चुप्पी पर निर्भर' रहने वाला बताया। मिल्टन फ्राइडमैन ने अपनी पुस्तक 'कैप्टि्लीज्म एंड फ्रीडम' में तर्क दिया कि स्वतंत्रता 'एक आदमी पर उसके साथियों के द्वारा डाले जाने वाले दबाव की अनुपस्थिति है'। नकारात्मक स्वतंत्रता के विपरीत, सकारात्मक स्वतंत्रता समाज सामाजिक-

आर्थिक स्थितियों, अधिकारों, समानता और न्याय के साथ स्वतंत्रता को जोड़ती है। इस नई दृष्टि का मानना था कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बजाय सामान्य अच्छाई पर जोर दिया जाना चाहिए। इसने राज्य को दुश्मन के रूप में नहीं, बल्कि स्वतंत्रता को बढावा देने वाले के रूप में देखा। यह ये भी मानता है कि समानता के साथ कोई स्वतंत्रता नहीं हो सकती है और समानता के आधार पर ही स्वतंत्रता का सकारात्मक अर्थ होता है। नकारात्मक स्वतंत्रता कुछ लोगों के हाथ में निजी सम्पत्ति पर ध्यान केन्द्रित करती हैं और उनकी रक्षा करती है, जबकि गरीब वर्ग को उनके हाल पर छोड़ दिया जाता है। अत: राज्य को हाशिए के वर्गो के विकास के लिए सक्षम स्थितियाँ प्रदान करनी चाहिए। टी एच ग्रीन ने विचार दिया कि स्वतंत्रता प्रतिबंध की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि ऐसा कुछ करने के लिए सकारात्मक शक्ति है जो महत्वपूर्ण व आनंददायक हो, जिसे हम सामान्यतः दूसरों के साथ मिलकर करते भी हैं या आनंद लेते हैं। हैराल्ड लास्की ने कहा कि ' स्वतंत्रता उस माहौल को बनाए रखने के लिए उत्सुक रहती है जिसमें सभी को अपने सर्वश्रेष्ठ आत्महित की प्राप्ति के अवसर मिलते हैं'।

12.2.1 स्वतंत्रता पर जे एस मिल के विचार

जे एस मिल के निबंध 'आन लिबर्टी' (1859) (स्वतंत्रता पर) को राजनीतिक स्वतंत्रता की चर्चाओं में एक ऐतिहासिक प्रकाशन के रूप में जाना जाता हैं। मिल के अनुसार, स्वतंत्रता के बिना व्यक्ति का विकास असंभव है और यह समाज की खुशी के लिए भी आवश्यक है। उनका मानना है कि प्रतिबंध एक बुराई है और व्यक्ति को 'स्वयं पर' छोड़ दिया जाना चाहिए। स्वतंत्रता पर मिल के तर्क को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है जो इस प्रकार है – विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा कार्रवाही की स्वतंत्रता। मिल विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मामले में पूर्ण स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं और तर्क देते हैं कि 'यदि सिवाय एक व्यक्ति को छोड़कर सम्पूर्ण मानव जाति की एक राय थी, और केवल एक व्यक्ति का विचार विपरीत था, तो मानव जाति के द्वारा उस एक व्यक्ति को शांत कराना न्यायसंगत नहीं होगा, अगर उस व्यक्ति के पास शक्ति थी, तब मानव जाति को शांत करना न्यायसंगत होगा'। उन्होंने आगे बताया कि क्यों यहां तक कि एक व्यक्ति की आवाज को भी दबाना समाज के लिए खतरनाक हो सकता है और सवाल यह है कि तब क्या होगा यदि उस व्यक्ति की राय सच है? उस स्थिति में, मानवता सत्य से वंचित हो जाएगी और विकास का अवसर हाथ से चला जाएगा। दूसरा, उन्होंने स्वीकार किया कि एक संभावना है कि वह एक राय झूठी हो, लेकिन इस मामले में भी अभिव्यक्ति मूल्यवान है क्योंकि यह मौजूदा सत्य की पुष्टि करेगा। आखिर में, वो तीसरे विकल्प पर भी चर्चा करते हैं और इस विचार से सहमत होते हैं कि सच्चाई अक्सर 'उदार' होती है और आंशिक रूप से सत्य व आंशिक रूप से झूठी हो सकती है। उनका तर्क हैं कि व्यक्तियों द्वारा किए गए निर्णय अक्सर उन विश्वासों पर आधारित होते हैं, जिन्हें वे मानते हैं कि वे अचूक हैं तथा इसके आस-पास की चर्चा के सभी विकल्पों को त्याग देते हैं। लेकिन मिल के लिए, ज्ञान और समझ में प्रगति खुली चर्चा के माध्यम से आती है क्योंकि विवादित विचारों का परिणाम एक उन्नत सत्य होगा, तथा मानव जाति के लिए सत्य की खोज का अंत होगा। मिल का मानना था कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता विचारों के संघर्ष को सुगम बनाती है, जिससे विचार, चर्चा और प्रगति को बौद्धिक प्रोत्साहन मिलता हैं। वो आश्वस्त थे कि इस तरह की स्वतंत्रता के अभाव में, समाज पर हठधर्मिता का प्रभुत्व होगा। ऐसे विश्वासों पर संघटित समाज पूर्वाग्रहों से विकृत हो जाएगा और विचारों के अभाव में एक तर्कसंगत नींव के आधार से वंचित होगा। यह व्यक्तित्व हैं जो मनुष्य को व्यवहार रीति-रिवाज और प्रथाओं के स्वीकृत तरीकों का अंधाधुंध पालन करने के बजाय चुनने में सक्षम बनाता है। जीवन पद्धति 'सही' अथवा 'गलत' इसके बारे में कोई पूर्व-निर्धारित अवधारणा नहीं है और 'सही' विकल्प

की विषय-वस्तु, उस व्यक्ति की प्रकृति पर निर्भर करती है। मिल ने प्रस्तावित किया कि व्यक्तियों को स्वतंत्रता के सर्वोच्च संभावित अधिकार क्षेत्र का उपयोग करना चाहिए, लेकिन यह भी स्वीकार किया कि अनियंत्रित स्वतंत्रता उत्पीड़न की सम्भावना पैदा कर सकती है और जिसके परिणामस्वरूप निरंकुश व्यवहार हो सकता है। अत; उन्होने सभी मानवीय कार्यों को दो श्रेणियों में विभाजित किया, जैसे– 'स्वयं से संबंधित क्रियाकलाप' और 'अन्य से संबंधित क्रियाकलाप'। स्व-संबंधित कार्य वे हैं जो केवल व्यक्ति से सरोकार रखते हैं और इस क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। व्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ हस्तक्षेप, केवल उसे दूसरों को नुकसान पहुंचाने से रोकने के लिए उचित हैं अर्थात अन्य से संबंधित क्रियाकलापों के मामले में। वास्तव में, 'हानि सिद्धांत' समाज के प्रति व्यक्ति के कर्तव्य को सुनिश्चित करता है। इस प्रकार, यह समझा जा सकता है कि यद्यपि मिल भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मामले में पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करते हैं, साथ ही साथ उन्होंने व्यक्ति द्वारा किए जा रहे कार्यों पर कुछ सीमाएं लगाने का समर्थन किया ताकि समाज में व्यवस्था बनी रहे। यहां 'नियंत्रण'(सेंसरशिप) की अवधारणा आती है क्योंकि ये सीमाएं समाज में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रकार के 'नियंत्रण' का आकार लेती हैं।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) स्वतंत्रता पर जे एस मिल के विचारों पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सकारात्मक स्वतंत्रता से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

12.3 नियंत्रण (सेंसरशिप): अवधारणा

'सेंसरशिप' शब्द की उत्पत्ति, 443 बीसी में रोम में स्थापित सेंसर कार्यालय से हुई। इसके द्वारा नैतिकता को नियंत्रित करने और अनुष्ठानिक रूप से लोगों को शुद्ध करने का मकसद था। इस कार्यालय से 'नियंत्रण' शब्द आधुनिक रूप से परिभाषित हुआ, जिसने सार्वजनिक कृत्यों, विचारों की अभिव्यक्तियों और कलात्मक प्रदर्शनों को परखने, प्रतिबंधित और निषेध करने का कार्य किया। नियंत्रण को आज के समय में सामान्यतः एक अशिक्षित और

अधिकाधिक दमनकारी दौर के अवशेष के रूप में माना जाता है। समाज के अन्तर्गत प्रसारित विचारों, सार्वजनिक संचार व सूचनाओं के माध्यमों का दमन या अकंश, 'नियंत्रण' (सेंसरशिप) कहलाता है। रितु मेनन का तर्क हैं, कि 'नियंत्रण' तब होता जब एक ऐसा विचार व्यक्त करने वाली कला, जो वर्तमान मान्यताओं के तहत नहीं आती है, उसे जब्त कर लिया जाता है, उसमें कटौती या उसे वापस लिया जाता है या अनदेखा या बदनाम किया जाता हैं अथवा दर्शकों की पहुंच से दूर कर दिया जाता है। नियंत्रण एक ऐसा तरीका हैं जिसका उपयोग राज्य या समाज सांस्कृतिक क्षेत्र में छल-कपट के माध्यम से अपनी सत्ता शक्ति को बनाए रखने के लिए करता है। समाज में 'क्या स्वीकार्य है', इसका निर्णय लेने में सांस्कृतिक क्षेत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। क्याोंकि सांस्कृतिक आधिपत्य कुछ शब्दों या कृत्यों को सभ्य और अन्य को असभ्य घोषित करता है और आगे चलकर इसके अर्थ व विचार को नियंत्रित करता है। सांस्कृतिक समझ के अतिरिक्त धर्म तानाशाही और बाजार जैसे कई अन्य स्रोत भी 'नियंत्रण' हेतु उपयोग हो सकते हैं। सर्वप्रथम, धार्मिक नेतृत्व के द्वारा नियंत्रण का इस्तेमाल किया गया। प्रारंभ में, सभी कला और साहित्यिक कार्यों को धार्मिक विचारों ने काफी प्रभावित किया गया था तथा 'अच्छा और स्वीकार्य' जैसे शब्द उन कार्यों के साथ जुड़े हुए थे, जो मौजूदा यथास्थिति की सराहना करते थे। जबकि जो लोग जिरह करते थे, उन्हें "ईशनिंदक, अश्लील और तर्कहीन" माना जाता था।

रोमन कैथोलिक चर्च ने सूची (इंडेक्स) 'लाइब्रोहम प्रोहिबिटम' विकसित किया, जो निषिद्ध किताबों की एक सूची थी, जिनकी उत्पत्ति 5वीं शताब्दी सीई पूर्व हुई और जो कि 20वीं शताब्दी में आधिकारिक मंजूरी से जारी रखी गई। विचारक की सोच को चुप कराने का सबसे असाधारण उदाहरण गैलीलियो गीलीलि (1564-1642) पर 1633 में प्रतिबंध का लगाया जाना था। यह इस प्रसिद्ध वैज्ञानिक के लिए इटली में एक कठिन समय था, क्योंकि उनके वैज्ञानिक निष्कर्ष चर्च द्वारा व्यापकता से फैलाई गई व्याख्याओं को चुनौती दे रहे थे। इस प्रकार का नियंत्रण न केवल कला, वास्तुकला या साहित्यिक कार्यों तक सीमित था, अपितु भाषा पर भी था तथा पवित्रता और शुद्धता बनाए रखने का जिम्मा महिलाओं पर डाला गया। इसने एक 'आदर्श और नैतिक' महिला के जीवन को परिभाषित किया, जो परिभाषित संरचना के अनुकूल नहीं रहा, उसे सामाजिक आलोचना का शिकार बना दिया।

शानदार क्रांति (Glorious Revolution) और फ्रांसीसी क्रांति ने इतिहास में एक नए युग को चिह्नित किया क्योंकि लोगों ने स्वतंत्रता, समानता और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भूमिका जैसे आदर्शों की मांग शुरू की। धार्मिकता से लौकिक शक्ति की ओर का बदलाव विभिन्न संस्कृतियों में अलग-अलग रूप में कार्य किया। दुनिया गवाह है कि जर्मनी में नाजीवाद और इटली में फासीवाद का उदय हुआ क्योंकि शक्ति का उच्चस्तर का संकेन्द्रण हुआ परिणामस्वरूप द्वितीय विश्व युद्ध हुआ। हिटलर और मुसोलिनी ने लोगों के दिमाग पर नियंत्रण रखने के लिए अभियांत्रिक भाषा का इस्तेमाल किया तथा अभिव्यक्ति के सभी रूपों को दबा दिया जो उनके अधिकार और वैधता पर सवाल उठा सकते थे। इसके अलावा स्टालिन की अवधि के सोवियत संघ की गंभीर आलोचना की गई क्योंकि उस दौरान कला, साहित्य, फिल्मों और संचार के अन्य माध्यमों पर नियंत्रण किया गया। तानाशाहों के तहत भाषा सिर्फ अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं रही, बल्कि राज्य ने इसे समर्थन और अस्वीकृति के वाक्यांशों को परिभाषित करने के लिए इस्तेमाल किया, जिन वाक्यांशों को सभी के द्वारा स्वीकार किया जाना था। आधिकारिक कम्यूनिस्ट पार्टी सिद्धांतो के प्रकाश में ऐसे पर्यवेक्षण, राजनीतिक चर्चाओं या किताबों और समाचार पत्रों तक सीमित नहीं थे, बल्कि प्रसारण (ब्राड्कास्ट) समेत सभी प्रकार के विषयों और प्रकाशन के सभी रूपों को समेटे हुए थे। इसके परिणामस्वरूप, उन लेखकों को स्व-नियंत्रण करना पड़ा जो किसी तरह से अपना

काम प्रकाशित कराना चाहते थे। 1980 के दशक के उत्तरार्ध में सरकार की ग्लासनोस्ट (या 'खुलेपन') की नीतियों के आगमन से नियंत्रण में कुछ छूट दी गई। नव-उदारवादी नीतियों के आगमन ने अंतर्राष्ट्रीय मामलों की संरचना को परिवर्तित कर दिया। निजीकरण और उदारीकरण जैसी शब्दावली प्रचलन में आई, जो देशों को मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था के 'जादुई' विचार को स्वीकार करने के लिए दबाव डाल रही थी। 'अंधाधुंध विज्ञापनों' से भी हुई बाजार संचालित अर्थव्यवस्थाओं ने न केवल लोगों की क्रय शक्ति और आवश्यकता को प्रभावित किया, बल्कि नागरिकों की राजनीतिक राय को गढा और पुनःनिर्मित किया। चुनाव अभियान उन विज्ञापनों के अधीन हो गए, जिन्होंने शब्दों के अर्थों को विकृत करना शुरू कर दिया और वाक्याशों को उनके सन्दर्भ से हटाकर प्रस्तुत करने लगे। इस तरह के अप्रत्यक्ष सांस्कृतिक बाजार केन्द्रित नियंत्रण के साथ वास्तविक खतरा इस तथ्य में निहित हैं कि यह 'सोचने के अधिकार' और 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं डालता है। अपितु यह पूरी तरह से स्वंय के बारे में सोचने की 'क्षमता' को नष्ट करता है और व्यक्ति के तर्कसंगत होने के पूरे विचार पर प्रश्नचिन्ह लगाता है। इस प्रकार, उपर्युक्त चर्चा से पता चलता है कि पूरे इतिहास में विभिन्न रूपों में नियंत्रण का इस्तेमाल लोगों के दिमाग को नियंत्रित करने और आधिपत्य की शक्ति को बनाए रखने और समाज में व्यवस्था बनाए रखने के नाम पर अधिकारियों के द्वारा उनके कृत्यों और नीतियों के लिए वैधता हासिल करने हेतु किया जाता रहा है।

12.4 स्वतंत्रता और नियंत्रण (सेंसरशिप) के मध्य संबंध

एक मुक्त समाज का अस्तित्व विभिन्न समूहों के बीच संवाद, सूचनाओं का मुक्त प्रवाह और निरंतर वाद-विवाद और आलोचना के लिए स्थान पर निर्भर करता है। क्योंकि यह ज्ञान के क्षितिज का विस्तार करने और मौजूदा सत्य को पुनर्स्थापित करने की अनुमति देता है। लोकतंत्र में, नागरिकों की सहमति सरकार की कार्यवाही को वैधता प्रदान करने के लिए अनिवार्य है, जो केवल स्वतंत्र भाषण और अभिव्यक्ति पर संरचित सक्रिय स्वतंत्रता के अस्तित्व के साथ संभव है। यह तर्क राजनारायण बनाम उत्तर-प्रदेश राज्य (1976) के मामले में भारत के सुप्रीम कोर्ट के फैसले की नींव बन गया, कि सूचना का अधिकार, अनुच्छेद 19(1) के अन्तर्गत मौलिक अधिकारों का एक हिस्सा है। यह स्वतंत्रता के महत्व को भी सुझाता है, जिसे राज्य द्वारा लोकतंत्र के 'चौथे स्तंभ' अर्थात प्रेस को दिया जाना चाहिए। प्रेस की आजादी के माध्यम से सूचना का अधिकार समृद्ध होता है, जो नागरिकों को तर्क के सभी पक्षों को सुनने में और फिर अपनी स्वतंत्र राय किसी विषय पर बनाने में सक्षम बनाता है और इस प्रकार वे निष्पक्ष तरीके से निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेते हैं। राज्य एक समयावधि में 'नियंत्रण' के विभिन्न तंत्रों के माध्यम से संचार के मुक्त प्रवाह को रोकने की कोशिश करता हैं। स्वतंत्रता पर राज्य और नागरिकों के बीच निरंतर संघर्ष, हाब्स और लॉक के समय से ही देखा जा सकता है। हाब्स ने तर्क दिया कि राज्य से सुरक्षा पाने के बदले में, नागरिकों को अपने कुछ अधिकारों का समर्पण करना चाहिए। इस प्रकार, उन्होंने समाज में कानून व्यवस्था को बनाए रखने के लिए नागरिकों पर राज्य के द्वारा लगाए जाने वाले कुछ प्रतिबंधों को सही ठहराते हुए, अधिकारों के एक वृहत समूह के साथ एक मजबूत राज्य के निर्माण का समर्थन किया। लॉक ने एक सच्चे उदारवादी होने के नाते तर्क दिया कि राज्य केवल एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करने और प्रत्येक नागरिक के सार्वजनिक और निजी लेनदेन की देखरेख करने के लिए था। उन्होंने व्यक्तियों की स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने वाले राज्य में, नागरिकों की उदार स्थिति का बचाव किया। जे एस मिल ने 'नियंत्रण' के खिलाफ तर्क देते हुए सुझाव दिया कि मानव का ज्ञान (किसी विषय पर) भिन्न-भिन्न रायों को व्यक्त करने से आगे बढ़ता है, ताकि सच्चाई और त्रुटि के बीच के अतंर को

स्पष्टता से देखा जा सके। इस प्रक्रिया में 'नियंत्रण' हस्तक्षेप करती है और पहले से ही घोषणा कर देती है कि यह या वह राय गलत या निषिद्ध हैं। अतः 'नियंत्रण' में सच्चाई को और सच्चाई के अनुसरण को नजरअंदाज कर, इसकी जगह अनुरूपता स्थापित करने की, एक अंतर्निहित प्रवृत्ति होती है। कार्ल पापर ने भी किसी भी तरह के नियंत्रण के विरूद्ध चेतावनी दी और अपनी कृति 'द ओपन सोसाइटी एंड इट्स एनीमीज' (खुला समाज और इसके दुश्मन) 1945 में तर्क दिया कि समाज की योजना बनाने या नियंत्रण करने के किसी भी प्रयास से मानव स्वतंत्रता में कमी आएगी। वो आगे इंगित करते हैं कि 'मानव ज्ञान' में सवृंद्धि होती है और समय के साथ बदलता है तथा सामाजिक घटनाओं को प्रभावित करता हैं। इस प्रकार, भविष्य आज़ाद व्यक्तियों के द्वारा निर्मित किया जाता है, जिनकी पहुंच "खुले समाज" तक होती हैं। इसी तरह के समान विचारों का प्रतिरूप आइजिया बर्लिन के शब्दों में पाया जाता है जो तर्क देते है कि "प्रबुद्ध तानाशाही" अनिवार्य रूप से राज्यवाद को जन्म देता है और इसलिए यह 'मानव विचार के पूरे इतिहास में सबसे शक्तिशाली और खतरनाक तर्कों में से एक है"। अधिनायकवाद को हन्ना अरेंडट द्वारा स्वतंत्रता पर प्रतिबंधों के साथ जोड़ा गया, जिन्होंने "समाज के सूक्षमकरण" को अधिनायकवाद की एक अनिवार्य विशेषता के रूप में बताया, जहां परिवार, मैत्री, व्यापार संघ, धर्म इत्यादि जैसे प्रत्येक सन्निकट संघ को राज्य द्वारा नष्ट कर दिया गया या नियंत्रण में ले लिया गया। राज्य ने शासन के सभी रूपों में अपनी चिरस्थायी उपस्थित दर्ज करके और भय के व्यवस्थित इस्तेमाल से, एकाकी व्यक्तियों का तैयार किया जो राज्य के लिए पूर्णतः वफादार थे। 'नियंत्रण' की अवधारणा को हर्बर्ट मार्क्युज़ ने अपनी पुस्तक 'रिप्रेसिव टॉलरेंस'(निरोधक सहिष्णुता) में अलग तरह से माना। उन्होंने तर्क दिया कि किसी राज्य में 'नियंत्रण' के कानूनों का अभाव है तो जरूरी नही है कि व्यक्तियों की स्वतंत्र इच्छा की योग्यतम प्रयोग की गारंटी हो। वे आगे कहते हैं कि ऐसा समाज जहां सामान्य आबादी को समझाने और चालाकी से बात मनवाने का काम उन लोगों के द्वारा किया जाता है जिन्होंने मीडिया का नियंत्रित कर रखा हो, ऐसी स्थिति में भाषण की स्वतंत्रता केवल शक्तिशाली अभिजात वर्ग के हितों की सेवा कर सकती है। अतः वो शक्ति नियंत्रण के सांस्कृतिक दायरे और लोगों की स्वतंत्र इच्छा पर उसके प्रभाव पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। लुई अलथुज़ेर के 'राज्य दमन सिद्धांत' को समझना उतना ही महत्वपूर्ण है क्योंकि वो राज्य के दमनकारी और वैचारिक तंत्र के बीच अंतर करते हैं। उन्होंने बताया कि वैचारिक तंत्र समाज के निजी क्षेत्र जैसे–परिवार, शिक्षा, धर्म, मीडिया आदि से संबंधित है, जो सूचनाओं पर नियंत्रण के माध्यम से समाज की प्रमुख विचारधारा का सृजन करता है। इस प्रकार, 'नियंत्रण' व्यक्तियों या वर्गों द्वारा नहीं किया जाता है, बल्कि यह निजी डोमेन (प्रक्षेत्र) द्वारा अनजाने में की गई एक प्रक्रिया है, जिसमें यह अंतर्निहित हैं। इस प्रकार, उपर्युक्त तर्कों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नियंत्रण का उपयोग हमेशा राज्य द्वारा सीधे अपनी शक्ति को बनाए रखने के लिए नहीं किया जाता है, लेकिन कई बार इसका उपयोग संस्कृति, समाज, मीडिया, धर्म, शिक्षा आदि के माध्यम से किया जा सकता है। लेकिन सवाल यह उठता है कि राज्य नियंत्रण के अस्तित्व को कैसे न्यायसंगत ठहराते हैं। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 19 स्वतंत्रताओं की गारंटी देता है, जैसे– भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सभा, संचलन, पेशे इत्यादि की स्वतंत्रता। हालांकि इन अधिकारों की विशेषता जबकि मौलिक है, पर ये प्रकृति में निरंकुश नहीं है और 'तर्कसंगत' प्रतिबंधों के अधीन है। इन प्रतिबंधों को देश की संप्रभुता, अखंडता और सुरक्षा की रक्षा, मानिहानि के विरूद्ध, शालीनता और नैतिकता के रक्षार्थ इत्यादि के आधार पर लगाया जा सकता है। इस प्रकार पूर्ण स्वतंत्रता की अवधारणा उस क्षण अशांत वातावरण में प्रवेश करती है, जिस समय यह नैतिकता, शालीनता या आसान भाषा में 'अभद्र भाषा' से संबंधित हो जाती है। अभद्र भाषा को उस भाषण के रूप में समझा जा सकता है, जो विशेष लोगों या समुदायों पर उनकी प्राकृतिक हीनता (जैसे

नस्लवादी भाषण) को इंगित करके नुकसान पहुचांने के इरादे से निर्देशित किया जाता है या वो भाषण जो स्वभाव से एक समूह के लागों का दूसरे पर प्रभुत्व का दावा करता हैं (जैसे नारी-द्वेशी भाषण)।

भाषा और भाषण हमेशा से एक बहुत शक्तिशाली माध्यम रहे हैं और कई बार उनका इस्तेमाल हिंसा भड़काने या लोगों की भावनाओं को आहत करने के लिए किया जा सकता हैं। रिचर्ड डेल्गाडो ने अपनी कृति 'वर्डस् दैट वुन्ड' (1993)(शब्द जो घायल करते हैं) में तर्क दिया कि नस्लवादी भाषण से पीड़ित लोगों पर इसका गहरा मनोवैज्ञानिक कुप्रभाव पड़ता है जो आत्म-घृणा, अपमान और एकाकीपन (अलगाव) की ओर ले जाता है। इस प्रकार यह तर्क भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कुछ प्रतिबंधों की आवश्यकता को रेखांकित करता है। इसी तरह के विचार एंडिया ड्वर्टिन और कैथरीन मैकिनन ने देते हुए कहा कि लैंगिक उन्मुख भाषण को विनियमित किया जाना चाहिए क्योंकि यह महिलाओं के महत्व को कम करता है और न केवल हिंसा के लिए आधार प्रदान करता है, बल्कि यह महिलाओं के खिलाफ हिंसा भी है। उन्होंने अश्लील साहित्य (पोर्नोग्राफी) पर नियंत्रण की मांग की क्योंकि यह अपमान और हिंसा को बढ़ावा देता है जो कि समानता की अवधारणा के साथ मौलिक रूप से अंसगत हैं। इस प्रकार समाज, में विद्यमान विभिन्न प्रकार के 'नुकसान से नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करने के लिए 'नियंत्रण' राज्य के संविधान में एक कानूनी श्रेणी प्राप्त कर सकता है। इसे समझने के लिए सबसे अच्छा उदाहरण भारतीय संविधान का अनुच्छेद 17 है, जो अस्पृष्यता को समाप्त करता है और किसी भी रूप में इसके चलन को वर्जित करता है। इस प्रकार, राज्य द्वारा नियंत्रण और प्रतिबंध का उपयोग, समाज में सामाजिक न्याय को बहाल करने के लिए किया गया था। इंटरनेट के आगमन के साथ, राज्य को नई चुनौती का सामना करना पड़ रहा हैं, जैसे– डिजिटल मीडिया के क्षेत्र को कैसे विनियमित किया जाए? इंटरनेट, 'शक्ति' को सरकार से नागरिक-समाज, व्यक्तिगत ब्लागर्स और नागरिक-पत्रकारों की ओर स्थानांतरित कर रहा हैं। चीन जैसे सत्तावादी राज्यों में, संचार के क्षेत्र में राज्य के मीडिया ब्रांड का वर्चस्व रहता है, क्योंकि राज्य विषय-वस्तु को कड़ाई से नियंत्रित करता है। अरब में जनआक्रोश की घटनाओं से पता चलता है कि इंटरनेट लोगों को एकत्र करके सरकार के पतन में प्रमुख भूमिका निभा सकता है इस प्रकरण ने राज्यों को डिजिटल मीडिया के प्रति अधिक सतर्क बना दिया है।

बोध प्रश्न 2

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) स्वतंत्रता और नियंत्रण (सेंसरशिप) पर हर्बर्ट मार्क्युज के विचार क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) दुनिया भर में सरकारों के लिए इंटरनेट एक चुनौती के रूप में कैसे उभर रहा है?

.....

.....

.....

.....

.....

12.5 सारांश

स्वतंत्रता और नियंत्रण के बीच एक जटिल संबंध है जो सवालों से भरा भानुमती का पिटारा खोल देता है, ये सवाल हैं– क्या सभी तरह की स्वतंत्रताएं निरंकुश होती हैं? प्रतिबंधों को लगाने के लिए निर्णायक पैमाना क्या होना चाहिए? किसे इस बात की जांच करने की जिम्मेंदारी दी जानी चाहिए कि लगाए गए प्रतिबंध तर्कसंगत हैं या नहीं? इनमें से प्रत्येक प्रश्न के प्रत्युत्तर अन्तहीन हैं और समाज में मौजूद सभी समूहों को संतुष्टि प्रदान करने वाला प्रत्युत्तर देना, यदि असंभव नही है तो मुश्किल बहुत है। अरस्तु के शब्दों में, "मनुष्य स्वभाव से एक सामाजिक प्राणी है" और अकेले रहने के लिए या तो उसे जानवर होना चाहिए या भगवान। अतः यह सुझाव दिया जा सकता है कि किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता, जो अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता को नुकसान और बाधित करती है, उसे प्रतिबंधित करना होगा। लेकिन साथ ही, व्यक्तियों की स्वतंत्र तर्कशीलता को नियंत्रित करने के इरादे से, उन पर लगाए गए अतार्किक प्रतिबंधों का नागरिकों द्वारा सच्चे लोकतंत्र के आदर्शों की पुनर्स्थापना हेतु चुनौती दी जानी चाहिए।

12.6 संदर्भ

भार्गव, राजीव और आचार्या, अशोक(2008), *पोलटिकल थ्योरी* (राजनैतिक सिंद्धात), नोएडा: पीयरसन।

मिल, जे एस(1998), *लिबर्टी एंड अर्द ऐसेज़* (स्वतंत्रता और अन्य निंबध) न्यू यार्क : आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

पॉपर, के और गोमब्रिच, ई एच(1994), द ओपन सोसाइटी एंड इट्स ऐनीमीज़(खुला समाज/मुक्त समाज और इसके दुश्मन), न्यू जर्सी प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

स्क्रूटन, रोजर(2007), पॉलग्रेव मैकमिलन डिक्शनरी आफ पॉलिटिकल थॉट, (राजनीतिक विचारों का संग्रह) हैम्पशायर : पॉलग्रेव मैकमिलन।

सेन, अमर्त्य (1999), *डेवलपमेंट एज़ फ्रीड्म*, (स्वतंत्रता के रूप में विकास) आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपको अपने उत्तर में दो बिन्दुओं को उजागर करना चाहिए–

- विचार व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा कार्यवाई की स्वतंत्रता के बीच अंतर।
- स्व-संबंधित और अन्य-संबंधित कार्यों के बीच अन्तर।

2) आपके जवाब में निम्नलिखित दो बिंदुओ पर प्रकाश डाला जाना चाहिए।

- सकारात्मक स्वतंत्रता व्यक्ति की अच्छाई के बजाय 'सामान्य अच्छाई' पर केन्द्रित करती है।
- राज्य, स्वतंत्रता और समानता के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए, हाशिए पर पड़े वर्गो को सक्षम बनाने की स्थितियां प्रदान करता है।

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में इस तथ्य पर प्रकाश डाला जाना चाहिए कि स्वामित्व की अनुपस्थिति आवश्यक नही है कि किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता को बढ़ाए।

2) आपके जवाब में इस तथ्य को उजागर किया जाना चाहिए कि इंटरनेट शक्ति को राज्य से नागरिक समाज की ओर स्थानांतरित कर रहा है और यह सरकार को बनाए रखने या गिराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 13 रक्षात्मक भेदभाव बनाम निष्पक्षता का सिद्धान्त*

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 रक्षात्मक भेदभाव की संकल्पना

13.3 निष्पक्षता का सिद्धान्त

13.4 रक्षात्मक भेदभाव बनाम निष्पक्षता का सिद्धान्त

13.4.1 औपचारिक बनाम वास्तविक समानता

13.5 आलोचना

13.6 सारांश

13.7 संदर्भ

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य, राजनीतिक विज्ञान में दो प्रमुख संकल्पनाओं का अर्थ समझना है – रक्षात्मक भेदभाव और निष्पक्षता का सिद्धान्त। इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- रक्षात्मक भेदभाव की संकल्पना को स्पष्ट कर सकेंगे;
- निष्पक्षता का सिद्धान्त क्या है, इसे जान सकेंगे; तथा
- दोनों संकल्पनाओं के बीच के वाद-विवाद का विश्लेषण कर सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

असमानता और अन्याय सभी समाजों का एक हिस्सा रहे हैं और भारत इस मामले में अलग नहीं है। ब्रिटिश सत्ता के भारत से बाहर जाने के बाद, भारतीय संविधान के रचनाकारों ने इस समस्या की गंभीरता को स्वीकारा और जाति प्रथा जैसी कुरीतियों से निबटने के लिए रक्षात्मक भेदभाव की शुरुआत की। भारत के संविधान के अनुसार, कमज़ोर वर्गों के सामाजिक कल्याण के लिए विभिन्न संस्थाओं को उपलब्ध कराया गया। रक्षात्मक भेदभाव द्वारा राज्य जानबूझकर कुछ विशेष समूहों को जैसे जाति, धर्म, लिंग और स्थानिक स्थिति के आधार पर विशेषाधिकार देता है। रक्षात्मक भेदभाव के सिद्धान्त को *आरक्षण, उलट भेदभाव, सकारात्मक कार्रवाई तथा विशिष्ट बरताव* इत्यादि नामों से भी जाना जाता है। रक्षात्मक भेदभाव और निष्पक्षता के सिद्धान्त के बीच जो वाद-विवाद है, यह समानता और न्याय के सम्बन्धों के बीच का महत्वपूर्ण भाग है। इन सभी पक्षों के सम्बन्ध में आगे आने वाले भागों में व्यापकता से चर्चा की गई है।

13.2 रक्षात्मक भेदभाव की संकल्पना

रक्षात्मक भेदभाव का अर्थ उस नीति से है जिसके द्वारा राज्य जानबूझकर अपने नागरिकों में कुछ निश्चित मापदंडों के आधार पर भेदभाव करता है ताकि उनमें सबसे कमज़ोर लोगों

*सुश्री चिन्मयी दास, शोध विद्यार्थी, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

के हित की रक्षा हो सके। इस नीति का निर्माण उन लोगों के बचाव के लिए है, जो समाज वंचित हैं और जिनको पहले या वर्तमान समय में भेदभाव का सामना करना पड़ा है। यह राज्य के द्वारा उठाए गए सकारात्मक कार्य के कार्यक्रम हैं, ताकि समाज के सभी वर्गों को समानता का अधिकार और सबको समान रूप से न्याय प्राप्त हो सके। इन प्रावधानों का स्वरूप और संरचना भारत के संदर्भ में *सामाजिक न्याय* की संकल्पना का विश्लेषण करते हुए किया है। इसका उद्देश्य समाज में व्याप्त भेदभाव और शोषण को कम करने के लिए तथा समानता को उपलब्ध कराने के लिए हाशिए पर पड़े लोगों को सामाजिक मूल्य, वस्तुएँ तथा अवसरों को प्राथमिकता के साथ वितरण करने, अवसरों को समान रूप से दिलाने तथा उनके साथ समानता के विशेष व्यवहार करने के लिए नीति का प्रयोग करना है। रक्षात्मक भेदभाव का मुख्य उद्देश्य समाज के कमज़ोर वर्गों की सुरक्षा करना है, जो सामाजिक तथा ऐतिहासिक रूप से उपेक्षित रहे हैं, जिनका शोषण किया गया है। इन लोगों को शक्तिशाली और साधन सम्पन्न लोगों के नेतृत्व से बचाने के लिए उन्हें व्यापक अवसरों द्वारा राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने का प्रयास है।

रक्षात्मक भेदभाव का उद्देश्य समझने के लिए, यह आवश्यक है कि न्याय के *सामान्य* सिद्धान्त से सामाजिक न्याय की संकल्पना को अलग किया जाए। न्याय का कोई भी सामान्य सिद्धान्त, समाज को संपूर्णता से देखता है, जोकि एक समाज में मौजूद सामाजिक और शक्ति सम्बन्धों को नजरअंदाज करता है। यही कारण है कि न्याय का सामान्य सिद्धान्त जोकि सार्वभौमिकता का दावा करता है, इसके बावजूद सामाजिक-सांस्कृतिक, विशिष्ट नीतियाँ, जैसे कि सकारात्मक भेदभाव का विश्लेषण करने में सहायक सिद्ध नहीं होता है। दूसरी ओर, सामाजिक न्याय का सिद्धान्त विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्थाओं से लिया गया है। इनका आधार सामाजिक जीवन का मूल है जो प्रायः समाज के वास्तविक संदर्भों से अस्पष्ट अथवा स्पष्ट रूप से लिया जाता है, जहाँ पर सिद्धान्तों की रचना होती है। इसलिए, यह आवश्यक नहीं है कि सामाजिक न्याय एक संकल्पना के रूप में हमेशा सामान्य न्याय के सिद्धान्त का अनुसरण करे। इसके साथ ही, क्योंकि यह विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक विशिष्टताओं पर जोर देता है, इसलिए न्याय के सामान्य सिद्धान्तों के साथ इसका टकराव होता है। इसके अतिरिक्त, यह तथ्य कि सामाजिक न्याय की संकल्पना किसी शून्य से नहीं आती है, यह हमेशा ही पहले से मौजूद शक्ति संरचनाओं के साथ टकराव की स्थिति में आती है।

आदर्श रूप से, राज्य अपने कानूनी दृष्टिकोण में सभी नागरिकों को समान रूप से देखता है और उनके साथ समान व्यवहार करता है। हालाँकि, आधुनिक उदार राज्य इस आवश्यकता को मान्यता प्रदान कर चुका है कि अपने विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के नागरिकों के साथ अलग व्यवहार करना चाहिए। यदि राष्ट्र की जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा भेदभावपूर्ण सामाजिक प्रथाओं से ग्रसित है और इस तरह के व्यवहार से पीड़ित लोगों के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकारों का हनन हुआ है और राज्य से प्राप्त संसाधनों का उपभोग करने में बाधा आई है, तो जनसंख्या का वह हिस्सा विशेषाधिकारों देने के लिए उपयुक्त है। वंचित समूहों के विरुद्ध पूर्व में किए गए अन्याय की क्षतिपूर्ति राज्य अपने अभिकरणों द्वारा इन समूहों को विशेषाधिकार प्रदान करके करता है। भारत में संविधान के अनुच्छेद 17 के द्वारा अस्पृष्यता समाप्त कर दी गई है, किन्तु निम्न जातियों के विरुद्ध यह अभी भी सूक्ष्म या साफ रूप में व्यापक रूप से मौजूद है। इन सामाजिक बुराइयों को समाप्त करके नई सामाजिक व्यवस्था तैयार करने के लिए कुछ निश्चित और मजबूत उपायों को अपनाना जरूरी है। कुछ विद्वानों के अनुसार रक्षात्मक भेदभाव के पक्ष में निम्न तर्क प्रस्तुत किए हैं:

- अवसरों की समानता बहुत ही क्षीण या न्यून है और यदि इसे अधिक प्रभावकारी नहीं बनाया गया तो यह मौजूदा नहीं होगी।
- असमानता और गरीब, अशिक्षा तथा सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से पिछड़ेपन के बीच करणीय रिश्ता है।
- वस्तुओं और सेवाओं के आबंटन की वह कोई भी व्यवस्था अवसरों की समानता नहीं होगी और अनुचित होगी, यदि आबंटन समाज के विभिन्न भागों के लिए असमानता से किया गया है।
- रक्षात्मक भेदभाव कई सारे माध्यमों में से एक है जो वस्तुओं और सेवाओं के आवंटन में जो असंतुलन है, उसे ठीक करता है। यह प्रक्रिया निष्पक्षता के सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं करती है।

लोकतंत्र का कोई अर्थ नहीं, यदि लंबरूप (vertical) असमानता को समस्तरीय (horizontal) समानता में न बदला जाए। उच्च जातियों और निम्न जातियों के बीच, भारत की स्वतंत्रता के समय बहुत बड़ा आर्थिक और सामाजिक अन्तर था। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान, नेताओं ने इस राजनीतिक प्रासंगिकता को समझा कि मुख्यधारा से बहिष्कृत लोगों को मुख्यधारा में लाना होगा। यह समझ गए थे कि यदि इन लोगों को प्रेरित तथा गतिशील नहीं बनाया गया, तो जो राष्ट्रीय आन्दोलन व्यापक तथा समावेशी नहीं बन पाएगा। भारतीय संविधान के रचनाकारों का मुख्य उद्देश्य था समतावादी समाज का निर्माण करना, न्याय (सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक) प्रबल हो और हैसियत व अवसर की समानता हो। इसलिए यह कोई आश्चर्य का विषय नहीं है कि भारत के संविधान के प्रावधानों में समानता का भाव प्रमुखता से झलकता है। संविधान में कानून के समक्ष सभी नागरिकों को समानता के मौलिक अधिकार की गारन्टी प्रदान की गई है। किन्तु संविधान में यह भी उल्लेख कर दिया गया है कि "किसी भी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े नागरिक वर्गों तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति व प्रगति के लिए राज्य को काम करने से संविधान में कुछ भी नहीं रोकेगा। राज्य के पास यह शक्ति होगी कि वह समाज के वंचित लोगों की उन्नति और प्रगति के लिए विशेष उपायों के सम्बन्ध में प्रावधानों की रचना कर सकता है। दूसरे शब्दों में, हम यह कह सकते हैं कि आरक्षण की नीति या सकारात्मक भेदभाव सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन, एकीकरण और भारत के विकास की प्रक्रिया का हिस्सा है। इनमें से कुछ प्रावधान भारत के संविधान में सम्मिलित हैं, जो इस प्रकार से हैं: अनुच्छेद 15 और 16 (समानता का अधिकार), अनुच्छेद 46 (अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के शैक्षिक तथा आर्थिक हितों के संवर्धन संबंधी प्रावधान) तथा अनुच्छेद 340 (अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए)। वे प्रमुख क्षेत्र जहाँ राज्य ने रक्षात्मक भेदभाव को आगे बढ़ाया है वे हैं – शिक्षा, कल्याणकारी कार्य और आर्थिक गतिविधियाँ (आवास, भूमि अनुदान आदि) लोक सेवाएँ तथा राजनीतिक प्रतिनिधित्व। *राजनीतिक प्रतिनिधित्व* के प्रावधान व नीतियों का पालन करना *अनिवार्य* है, इसके अतिरिक्त बाकि सब विषयों में संविधान ने रक्षात्मक भेदभाव का काम राज्य के विवेक पर छोड़ा हुआ है।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) रक्षात्मक भेदभाव से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

13.3 निष्पक्षता का सिद्धान्त

निष्पक्षता के सिद्धान्त को समझने से पहले आइए हमें रॉल्स के न्याय के सिद्धान्त को जान लें, जिस पर निष्पक्षता का सिद्धान्त आधारित है। निष्पक्ष न्याय की अवधारणा का उल्लेख जॉन रॉल्स ने अपनी पुस्तक *ए थ्योरी ऑफ जस्टिस* में किया है। रॉल्स के अनुसार, कुछ नैतिक सिद्धान्त हम पर अनिवार्यतः लागू होते हैं, क्योंकि तर्कसंगत प्राणियों की मूल स्थिति" में वे स्वीकार्य होंगे। उनके लिए न्याय प्राकृतिक कानून नहीं है, न ही तर्क पर आधारित है परन्तु निष्पक्ष प्रक्रिया पर आधारित निष्पक्ष वितरण है। रॉल्स का मानना है कि समाज में सभी व्यक्तियों का ज्ञान समान नहीं होता है और न ही वे समान आर्थिक और सामाजिक स्थितियों में रहते हैं। अनभिज्ञता का आवरण या पर्दा का विचार प्रस्तुत करते हुए रॉल्स कहते हैं कि यही वह पर्दा है जो लोगों को दूसरे लोगों से केवल अलग ही नहीं करता है अपितु अपने जैसे ही अन्य लोगों से भी अलग कर देता है जो कि समाज में सबसे कम सुविधा प्राप्त लोग हैं। अतः न्याय की एक महत्वपूर्ण माँग है कि समाज के सबसे कम सुविधा प्राप्त लोगों का भी ध्यान रखा जाए। उनके अनुसार न्याय समाज के सभी सदस्यों के बीच सभी लाभों का वितरण है, इस अनुपात में नहीं कि एक व्यक्ति क्या करता है, परन्तु इस आधार पर कि कमज़ोर वर्गों में सबसे कमजोर व्यक्ति को भी इसका लाभ प्राप्त हो। रॉल्स यह महसूस करते हैं कि लाभों का इस प्रकार का वितरण केवल निष्पक्ष ही नहीं है बल्कि यह न्याय के मानकों के अनुसार भी है। अतः, हम यह आंकलन कर सकते हैं कि रॉल्स के लिए न्याय निष्पक्षता है। निष्पक्ष न्याय वहाँ होता है, जहाँ पर स्वतंत्र और समान व्यक्तियों के बीच सहयोग की निष्पक्ष व्यवस्था मौजूद होनी चाहिए। निष्पक्ष न्याय का उद्देश्य उन उपयुक्त सिद्धान्तों की तलाश करते हैं, वे उस समझौते का नतीजा हैं जो लोग आपसी फायदे के लिए करते हैं। जब लोग स्वतंत्र और समान स्थिति प्राप्त कर लेते हैं, वे ऐसा महसूस करते हैं कि अच्छाई की अपनी धारणा को पाने के लिए उन्हें एक जैसे प्राथमिक पदार्थ चाहिए। यह जो प्राथमिक वस्तुएँ हैं, वे हैं – मूल अधिकार, स्वतंत्रता, अवसर, आय, सम्पत्ति और आत्म-प्रतिष्ठा। अतः न्याय का अर्थ होगा कि प्राथमिक वस्तुओं का वितरण समान रूप से किया जाएगा, जब तक कि इनके असमान वितरण का लाभ सबसे कम सुविधाप्राप्त लोगों तक पहुँचे। न्याय की यह संकल्पना समाज की मूल संरचना से संबंधित है – जोकि समाज की मुख्य राजनीतिक, सांविधानिक, सामाजिक तथा आर्थिक संस्थाएँ हैं और कैसे वे एक साथ मिलकर सामाजिक सहयोग की एक संयुक्त योजना बनाती हैं। रॉल्स के अनुसार, न्याय की संकल्पना में मूल विचार निष्पक्षता का सिद्धान्त है, और वह न्याय को केवल सामाजिक संस्थाओं का गुण मानते हैं। न्याय का सिद्धान्त प्रतिबन्धों को सूत्रबद्ध करने का कार्य करता है कि किस प्रकार से प्रथाएँ स्थितियों तथा पदों को परिभाषित करती हैं और इसे शक्तियाँ, देनदारियाँ, अधिकार और कर्त्तव्य सौंपती हैं।

दूसरी और, निष्पक्षता का सिद्धान्त यह कहता है कि यदि बहुत सारे लोग सार्वजनिक वस्तुओं का उत्पादन करते हैं, जिनसे हम लाभ प्राप्त करते हैं। यह नैतिक रूप से स्वीकार्य नहीं होगा कि हम उन वस्तुओं को निःशुल्क प्राप्त करें, सेवाएँ लें और बिना कुछ खर्च ही या उनकी लागत दिए बिना ही वस्तुओं का लाभ उठाएँ। हमारा यह कर्त्तव्य बनता है कि हम वस्तुओं के उत्पादन की उचित लागत देकर लाभ उठाएँ। प्रारंभ में, सबसे पहले

निष्पक्षता के सिद्धान्त को सूत्रबद्ध एच.एल. ए. हार्ट के द्वारा किया गया था और उनके बाद रॉल्स द्वारा। ये दोनों ही सहयोग की निष्पक्ष योजना में सार्वजनिक वस्तुओं के उत्पादन के सम्बन्ध में भार और लाभ के वितरण के आधार पर सिद्धान्त आधारित समझ को प्रस्तुत करते हैं। निष्पक्षता के सिद्धान्त के अनुसार, यह हमारा कर्त्तव्य है कि सहयोग की निष्पक्ष योजना के तहत, हम मुफ्त की चीजों या सेवाओं की आशा न करें। यदि कुछ लोग मिलकर सार्वजनिक वस्तुओं का निर्माण करते हैं, तो एक व्यक्ति को उस वस्तु के उत्पादन में अपना योगदान दिए बिना किसी प्रकार के लाभ का आनंद नहीं लेना चाहिए। यह ग़ैर-परिणामवादी नैतिक दायित्व है, क्योंकि आधारभूत तर्क यहाँ पर कम आपूर्ति के बुरे परिणाम से बचने का नहीं है बल्कि न्याय का एक मानक स्थापित करने का है। इस अंतर्निहित समझ को रेखांकित किया गया है कि यह अन्याय होगा कि जो लोग सार्वजनिक वस्तुओं के निर्माण के लिए योगदान करते हैं, यदि जो लोग इन वस्तुओं का लाभ उठाते हैं, वे इनके उत्पादन के लिए कुछ भी न करें। कुछ सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्वों को न्यायोचित बनाने के लिए इस सिद्धान्त का इस्तेमाल किया जा सकता है। वास्तव में, इसका प्रयोग दर्शनशास्त्र और सामाजिक नीति में होता है, उन सेवाओं का समर्थन करने के लिए जो कि अच्छे शासन से संबंधित हैं या वैश्वीकरण की वजह से जन्मी कुछ असमानताओं के जवाब में। नोज़िक और फ्लू जैसे स्वातन्त्रयवादी रॉल्स से सहमत नहीं थे और उनके इस दावे को ठुकराते हैं कि जो प्राकृतिक रूप से नुकसान झेल रहे हैं, वे उन पर दावा करें जिनके पास सुविधा है। वे योग्यता, उत्कृष्ठता और इंसानों में प्राकृतिक असमानताओं में विश्वास रखते हैं।

13.4 रक्षात्मक भेदभाव बनाम निष्पक्षता का सिद्धान्त

समानता की चर्चा करते समय, हम केवल कानूनी समानता या अवसर की समानता की भावना से बात नहीं कर रहे हैं, बल्कि स्थितियों तथा परिणामों की समानताओं के सम्बन्ध में चर्चा कर रहे हैं। एक डाक्टर के पुत्र और एक गरीब व्यक्ति के पुत्र को समान अवसर प्राप्त होते हैं, परन्तु निष्पक्ष न्याय की माँग है कि सामाजिक वातावरण को बदलना होगा यदि सभी को समान शुरुआत प्रदान करती है। हालाँकि, इसके लिए हमको सामूहिक सहमति लेनी होगी, उन लोगों के हक में पक्षपात करने कि जो समाज के हाशिए पर पड़े हुए हैं। इसके अतिरिक्त "कानून के समक्ष समानता" तथा "कानून का समान रूप से संरक्षण" यह कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए।

13.4.1 औपचारिक बनाम वास्तविक समानता

औपचारिक समानता का अर्थ है कानून के समक्ष समानता, जोकि एक उदारवादी धारणा है। इसमें सार्वभौमिकता का सिद्धान्त शामिल है, जहाँ दो व्यक्तियों के साथ समान रूप से व्यवहार किया जाएगा जब तक कोई भेद न सिद्धान्त न हो। लूकास के अनुसार, कानून की सार्वभौमिकता उद्गम इस तथ्य पर आधारित है कि राज्य सभी व्यक्तियों के लिए अलग-अलग विधि निर्माण करने में असमर्थ है क्योंकि सभी व्यक्ति एक-दूसरे से भिन्न हैं। इसलिए व्यावहारिक दृष्टि से राज्य ऐसे कानूनों का निर्माण करता है, जोकि सार्वभौमिक रूप से लागू हो। इसका अर्थ यह हुआ है कि औपचारिक समानता केवल प्रक्रियात्मक न्याय उपलब्ध करा सकती है। दूसरी ओर, वास्तविक समानता की व्यापक अवधारणा है, जोकि अन्य मूल्यों से सम्बन्ध रखती है जैसे कि न्याय, अधिकार और समानता। फ्रैडमैन के अनुसार, वास्तविक समानता के चार दृष्टिकोण हैं जो निम्न प्रकार हैं:

- **परिणामों की समानता**: समतापूर्ण व्यवहार परिणामों की समानता की गारन्टी नहीं देता है।
- **आरंभिक बिन्दु की समानता**: वास्तविक समानता अर्जित नहीं हो पाएगी यदि लोग व्यक्तिगत रूप से अपनी दौड़ अलग-अलग बिन्दुओं से आरंभ करेंगे। समान अवसरों के दृष्टिकोण का उद्देश्य है कि सबका आरंभ बिन्दु समान हो।
- **अधिकार आधारित समानता**: यह समानता को वास्तविक अधिकारों की सहायक मानती है।
- **महत्व-आधारित दृष्टिकोण**: यह दृष्टिकोण समाज में उनकी निष्पक्ष भागीदारी के अतिरिक्त, सभी व्यक्तियों की गरिमा, स्वायत्तता तथा महत्व पर बल देता है।

यद्यपि कानूनी समानता के माध्यम से अवसर की समानता भारत में प्राप्त की जा चुकी है, परन्तु समाज में आर्थिक तथा सामाजिक असमानता का उन्मूलन या कम होना अभी शेष है। राज्य के संसाधनों पर सवर्णों के आधिपत्य ने एक असमान समाज की रचना की है जोकि समाज की समग्रता पर असर डालती है क्योंकि राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था में विषमताएँ मौजूद हैं। इस स्थिति में, समाज का जो शक्तिशाली तथा सशक्त वर्ग है, वह ज्यादातर कोशिश करता है कि यथास्थिति बनी रहे और मौजूदा भेदभावपूर्ण वितरक ढाँचे में किसी भी प्रकार के बदलाव का विरोध करेगा। दूसरी ओर, वंचित और हाशिए पर पड़े लोग, शायद यह चाहेंगे कि सामाजिक व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन आए और अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए राज्य द्वारा कुछ कठोर उपायों की आशा करेंगे। अतः, दोनों समूह अपनी-अपनी माँगें सामने रखेंगे तथा राज्य के अभिकरणों पर दबाव बनाएँगे कि उनको माँगों को पूरा किया जाए। इस स्थिति में राज्य दुविधा में पड़ जाएगा। इस प्रकार की स्थिति में एक प्रासंगिक प्रश्न खड़ा हो जाता है कि किसको प्राथमिकता दी जाए, स्वतंत्रता को या फिर न्याय को। हालाँकि, अधिकतर मामलों में जब शक्तिशाली वर्ग स्वतंत्रता की बात करता है, तो ऐसी स्थिति में समाज के लोग जो लोग हाशिए पर पड़े हैं और वंचित हैं, न्याय उनके लिए अस्तित्व का मुद्दा बन जाता है।

अतः, रक्षात्मक भेदभाव की धारणा को लाया गया, जिसका उद्देश्य वंचित वर्गों की स्थिति में सुधार करना, उनकी उन्नति के लिए अवसर देना और समाज की मुख्यधारा में लाना है। इसे उलट भेदभाव भी कहते हैं क्योंकि यह वंचित वर्गों के पक्ष में भेदभाव करती है, ठीक उसी प्रकार जिस तरह से अतीत में उनके साथ भेदभाव हुआ है। हालाँकि, इस नीति की वजह से समकालीन राजनीतिक सिद्धान्त में एक दार्शनिक वाद-विवाद उत्पन्न हुआ है। समतावादी और सकारात्मक उदारवादी इस तरह के भेदभाव का समर्थन करते हैं, क्योंकि यह न्यायपूर्ण और निष्पक्ष समाज के निर्माण में सहयोग देता है। स्वतंत्रतावादी तथा कानून के सकारात्मक पक्षकार इस प्रकार के भेद के प्रति अपनी अप्रसन्नता व्यक्त करते हैं। उनके अनुसार यह, श्रेष्ठता, योग्यता की कोटि को प्रभावित करते हैं तथा स्वतंत्रता के मूल अधिकारों और व्यक्ति के सम्पत्ति के अधिकारों को भी प्रभावित करते हैं।

भारत जैसे देश की आर्थिक और सामाजिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि सकारात्मक कार्य का विचार आज भी सामाजिक न्याय और लोकतंत्र के आधार को बनाए हुए हैं। याद रखना चाहिए कि न्याय और समानता की संकल्पना एक-दूसरे के विरुद्ध नहीं है और न्याय तथा समानता के दावों में किसी प्रकार का विवाद नहीं है। जिन लोगों को विशेष सुविधाओं की वरीयता देने की बात है, जिनको पिछली अनेक शताब्दियों से वंचित और उनके साथ भेदभाव किया जा रहा था तथा उनको मूल सुविधाएँ देने से भी वंचित किया गया था, उनके पक्ष में सकारात्मक भेदभाव न्याय के सिद्धान्त के

विरुद्ध नहीं है। बल्कि इस प्रकार का व्यवहार, न्याय की सम्पत्ति तथा वातावरण निर्माण करने के सम्बन्ध में अनिवार्य है। न्याय का अर्थ है लाभ और हानि का सही आवंटन। समानता तब ही सार्थक होती है, जब उसमें न्याय की दृष्टि या विचार समाहित होता है। जरूरतमंदों को सामाजिक न्याय दिलाने की प्रथा समानता के दावे को और मजबूत करती है।

कोई भी समाज अमीर और गरीब के रूप में विशेष लक्षणों में बँटे होते हैं, उसमें अमीरों की सम्पन्नता समाज के गरीब और कमजोर वर्गों के साथ किसी भी प्रकार मेल नहीं होता है। अतः एक समान समाज में, कमज़ोर वर्ग ही हैं जिन्हें सुरक्षा की जरूरत है। इस तरह से हम सरल शब्दों में कह सकते हैं कि हमको एक भेड़िये और एक मेमने के बीच अन्तर करना होगा और जो सबसे कमजोर या संवेदनशील है, उसका पक्ष लेना होगा।

रक्षात्मक भेदभाव, भारत के संविधान की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, जोकि समाज में सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए विशेष प्रावधानों की व्यवस्था करता है। हालाँकि, भारत ही एक देश नहीं है जिसमें रक्षात्मक भेदभाव के प्रावधानों की व्यवस्था है, बल्कि विश्व में इस प्रकार के अनेक देश मौजूद हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में, सकारात्मक कार्यों का प्रावधान है, जोकि हमारे संविधान में दिए गए रक्षात्मक भेदभाव जैसा ही है। ये दोनों प्रावधान किसी भी समानता के दावे अथवा किसी भी निष्पक्षता के सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं करते हैं।

लोगों को समान अवसरों की उपलब्ध कराने के प्रावधानों को हमेशा सराहा जाता है। इससे निष्पक्षता का उल्लंघन नहीं होता है और न ही न्याय के सिद्धान्त का। रक्षात्मक भेदभाव के विचार का वर्णन समाज के हाशिए पर पड़े लोगों के विरुद्ध अतीत में किए गए भेदभाव को ठीक करने के रूप में किया गया है। इसका मूल विचार किसी व्यक्ति के पूर्वज़ों द्वारा जो अन्याय किया था, उसके लिए यह एक क्षतिपूर्ति का प्रावधान है। हालाँकि, दशकों के लिए क्षतिपूर्ति बिना किसी इसकी समाप्ति अवधि की बात किए, यह बहुत से लोगों को निष्पक्ष नहीं लगता है। रक्षात्मक भेदभाव से जुड़ी अन्य बहस यह है कि यह राज्य के कार्यों और उसके अधिकार क्षेत्र में वृद्धि करती है, जोकि सामान्य रूप से लोगों की स्वतंत्रता और अधिकारों को बाधित करती है।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) "स्थिति की समानता" से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 आलोचना

रक्षात्मक भेदभाव का विचार विश्व के विद्वानों के बीच वाद-विवाद और चर्चा का विषय बन गया है। इसका जो लोग विरोध करते हैं वे कहते हैं कि एक भेदभाव की जगह दूसरे भेदभाव ने ले ली है। प्रक्रियात्मक समानता की वकालत करने वाले बाजार आधारित अर्थव्यवस्था का समर्थन करते हैं जहाँ योग्यता के आधार पर संसाधनों का आवंटन होना चाहिए। हालाँकि, योग्यता सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ में देखी जानी चाहिए और प्रमुख हितों का दबदबा रोकने के लिए योग्यता की परिभाषा सांस्कृतिक रूप से तटस्थ होनी चाहिए। आलोचना का दूसरा बिन्दु है कि सकारात्मक कार्य अस्थायी उपाय था परन्तु यह स्थायी रूप धारण कर चुका है, क्योंकि जो सत्ता में हैं उन्हें इससे राजनीतिक लाभ प्राप्त होते हैं। लक्षित समूहों में सामान्यतया फायदा उन्हें मिला है जिनकी स्थिति पहले से ही बेहतर है। लाभ उन लोगों तक नहीं पहुँच पाता है जो लोग वास्तव में हाशिए पर पड़े हैं और वास्तव में ही वंचित लोग होते हैं। रक्षात्मक भेदभाव के विरुद्ध बहुत सारे तर्क हो सकते हैं, किन्तु भारत जैसे देश जटिल समाज में वितरणात्मक न्याय को सहजता से अलग नहीं किया जा सकता। नैतिक जरूरतों की वजह से यह न्यायोचित है।

13.6 सारांश

सारांश में यह कह सकते हैं कि निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए हमको कमज़ोर वर्गों और संवेदनशील वर्ग तथा दूसरी ओर शक्तिशाली और समाज के सुविधाभोगी वर्गों के बीच अंतर करना होगा। लोकतंत्र की संवृद्धि के लिए, हमको वंचित और हाशिए पर पड़े लोगों की स्थिति को समृद्ध समाज के बराबर लाना होगा। वास्तविक न्याय तब ही माना जाएगा जब इसके लाभ उन तक पहुँचेंगे जो वास्तव में इसके अधिकारी हैं। सामाजिक न्याय की उपलब्धि जरूरतमदों को कराने से सिर्फ समानता का दावा ही नहीं मजबूत होता है परन्तु इससे लोकतंत्र भी सुदृढ़ होता है।

13.7 संदर्भ

आचार्य, अशोक (2008), "अफरमेटीव एक्शन" इन राजीव भार्गव एवं अशोक आचार्य (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी – एक प्रस्तावना,* नई दिल्लीः पीजन्स।

अब्बास, होइयेदा एवं कुमार, रंजन कुमार (2012), *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीयरसन।

अरोड़ा, एन.डी. एवं एस.एस. अवस्थी (2007), *पॉलिटिक्ल थ्योरी एंड पॉलिटिक्ल थॉट,* नई दिल्लीः, हर आनन्द पब्लिकेशन्स।

रॉल्स, जॉन (1971) *ए थ्योरी ऑफ जस्टिस,* हार्वर्डः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

विनोद, एम. जे और मीना देशपाण्डे (2013), *कंटमपरेरी पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पी. एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बिन्दुओं पर प्रकाश डालिएः

- समाज के कमज़ोर वर्गों की सुरक्षा के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयास।

- सकारात्मक भेदभाव भी कहते हैं।
- इस प्रकार की नीतियों के समर्थन में दिए गए तर्क

बोध प्रश्न 2

1) इसका अर्थ है कि सामाजिक वातावरण को बदलना चाहिए ताकि सभी की शुरुआत बराबर हो।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 14 परिवार, कानून और राज्य*

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 परिचय

14.2 राज्य की संकल्पना

14.3 परिवार की संकल्पना

- 14.3.1 परिवार : मूल सामाजिक इकाई
- 14.3.2 समाजीकरण का एक एजेंट (अभिकर्त्ता)
- 14.3.3 लोकतंत्र का आधार
- 14.3.4 अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण का अभिकरण

14.4 राजनीतिक सिद्धांत में परिवार और राज्य का संबंध

- 14.4.1 पारंपरिक या ग्रीक दृष्टिकोण
- 14.4.2 मार्क्सवादी दृष्टिकोण
- 14.4.3 उदारवादी परिपेक्ष्य
- 14.4.4 नारीवादी दृष्टिकोण

14.5 सारांश

14.6 संदर्भ

14.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

यह इकाई परिवार की संकल्पना, उसके कार्य और राजनीतिक सिद्धांत में परिवार एवं राज्य के बीच संबंध की जांच करता है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित बातों को जान जाएंगेः

- परिवार की संकल्पना और उसके कार्यों को समझने में सक्षम होंगे;
- परिवार और राज्य के बीच के संबंधों का विश्लेषण करने में सक्षम होंगे; तथा
- राजनीतिक सिद्धांत में परिवार के बारे में सार्वजनिक-निजी बहस को समझ पाएंगे।

14.1 परिचय

परिवार और राज्य के बीच संबंध बहुत जटिल है क्योंकि इन दोनों के बीच की सीमाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया गया है, जिसके कारण भ्रम और प्रतिवाद उत्पन्न हो जाते है। उदाहरण के तौर पर, यदि कोई अपने परिवार की ज़िम्मेदारी नहीं पूरी कर पाया तो सरकार इसमें हस्तक्षेप कर सकती है। वो व्यक्ति जो खुश और सुखी परिवारों से आते हैं, उनके एक अच्छे नागरिक होने की संभावना अधिक है; जबकि, नाखुश शिथिल परिवार कई सामाजिक समस्याओं और अस्थिरता के लिए प्रेरणा स्रोत हो सकते हैं। राज्य की कुशल नागरिकता को बढ़ावा देने, व्यक्तिगत खुशियों को बढ़ावा देने, सामाजिक स्थिरता को प्रोत्साहन देने और सामाजिक समस्याओं में भारी वृद्धि को रोकने में दिलचस्पी आदर्श

*डॉ. सुरभि गुप्ता, पुलिस, सुरक्षा एवं आपराधिक न्याय हेतु सरदार पटेल विश्वविद्यालय

परिवारों को बढ़ावा देना राज्य सरकार के लिए एक प्रेरक का काम करता है। किन्तु ये एक तरफा रिश्ता नहीं है, राज्य के व्यवहार को परिवार प्रभावित कर सकता है और साथ ही साथ वे उसकी क्रियाओं या कार्यों से प्राप्त होने वाले फल के भागीदार भी हो सकते हैं। जे जे रूसो ने अच्छे नागरिक बनाने में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका देखी और उनके मुताबिक अच्छे नागरिकों के स्व-सरकार में प्रभावी रूप से भाग लेने में सक्षम होने के लिए; परिवार को भावी नागरिकों को बचपन में ही कुछ साधन उपलब्ध कराने चाहिए। राज्य की राजनीतिक प्रवृत्ति भी राज्य और परिवार के रिश्तों को प्रभावित करती है। अधिनायकवादी राज्य की प्रवृत्ति होती है परिवारों का अलग करने की तथा उन प्राकृतिक समुदायों को नष्ट करने की जो नागरिकों की वफादारी राज्य से दूर ले जाएं। दूसरी तरफ, लोकतंत्र परिवार को अच्छे नागरिकों की तैयारी के लिए प्रशिक्षण मैदान के रूप में देखते हैं। अमरीकी भाषाविद् जॉर्ज लेकाफ के तर्क के मुताबिक, दक्षिणपंथी विचारधारा के लोगों के परिवारों के विचार पितृसत्ता एवं नैतिक मूल्यों पर आधारित होते हैं। दूसरी तरफ, वामपंथ की ओर झुकाव वाले लोगों के लिए आदर्श परिवार का आधार शर्तरहित प्रेम होता है। आइए, परिवार और राज्य के बीच के संबंधों के अध्ययन से पहले राज्य और परिवार की संकल्पनाओं का अध्ययन करें।

14.2 राज्य की संकल्पना

राज्य को परिभाषित करना आसान नहीं है क्योंकि इसकी परिभाषा पर कोई सामान्य सहमति नहीं है। सबसे पहले ध्यान देने की बात है कि राज्य के विभिन्न रूप हैं, जो कि एक दूसरे से महत्वपूर्ण तरीके से अलग हैं। ग्रीक शहर-राज्य, आधुनिक राष्ट्र राज्य से बिलकुल अलग हैं, जो कि फ्रांसीसी क्रांति के बाद से विश्व की राजनीति पर हावी है। समकालीन उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य जो ब्रिटेन और पश्चिमी यूरोप में अस्तित्व में है, वो हिटलर या मुसोलिनी के तानाशाही राज्य से अलग हैं। ये पूर्व सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप में मौजूद राज्य से भी अलग हैं। राज्य विभिन्न प्रकार के हैं लेकिन और एक राज्य कोई एक अखण्ड इकाई नहीं है। शुरुआत करने के लिए, राज्य और सरकार एक समान नहीं है। यह कई तत्वों का एक जटिल मिश्रण है तथा सरकार उनमें से एक तत्व है। एक पश्चिमी प्रकार के उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य में, जो लोग सरकार बनाते हैं वे निस्संदेह राज्य शक्ति के साथ हैं। वे राज्य के नाम पर बोलते हैं और राज्य की शक्ति को नियंत्रण में रखने के लिए कार्यालय में पद लेते हैं। हमको यह समझने की ज़रूरत है कि राज्य, नागरिक-समाज (सिविल सोसाइटी) और राष्ट्र से अलग है। राज्य प्रतिरोधी शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है जबकि नागरिक समाज स्वैच्छिक भागीदारी पर आधारित है। राष्ट्र की भावना, ऐसे लोगों के बीच समुदाय की भावना है जो अपने आपको दूसरे समुदाय वालों से अलग समझते हैं और अपने मामलों को खुद ही नियंत्रित करना चाहते हैं। यह अंतर आम धर्म, भाषा आदि पर आधारित हो सकता है। जब पूरी आबादी इस प्रकार की भावना साझा करती है तो उसे राष्ट्र-राज्य कहते हैं। हालांकि, ऐसा सभी राज्यों के साथ नहीं है और इसलिए राज्य और राष्ट्र एक समान नहीं हैं। उदाहरण के लिए, कूर्द के लोग ईरान, सीरिया, ईराक और तुर्की में फैले हुए हैं और वो खुद को एक राष्ट्र मानते हैं। एक राज्य के चार तत्व हैं – आबादी, क्षेत्र, सरकार और संप्रभुता।

विभिन्न विचारकों द्वारा राज्य के विचार को अलग-अलग तरीकों से प्रस्तुत किया गया है। कुछ ने इसकी प्रशंसा की; कुछ ने इसे अस्वीकार किया जबकि कुछ इसकी भूमिका और कार्यों को सीमित करना चाहते हैं। हेगेल ने राज्य को "भगवान की पृथ्वी पर चहलकदमी" कहा। प्लेटो ने अपनी पुस्तक "द रिपब्लिक" में आदर्श राज्य की बात कही। अरस्तु ने तर्क दिया कि मनुष्य केवल एक मनुष्य इसलिए था क्योंकि वो 'पोलिस' का सदस्य था जिसकी

वजह से नेक और अच्छा जीवन संभव हुआ। यूनानी विचार राष्ट्र की आधुनिक संकल्पना से अधिक सटीक रूप से मेल खाता है, यानि कि, एक निश्चित क्षेत्र की आबादी जो भाषा, संस्कृति और इतिहास साझा करती है–जबकि रोमन 'रेस पब्लिका' या 'राष्ट्रमंडल' (कॉमनवेल्थ), राज्य की आधुनिक संकल्पना के समान है। राज्य की आधुनिक संकल्पना निकोलो माकियावेली (इटली) और जीन बोडिन (फ्रांस) के लेखन में 16वीं शताब्दी में देखने को मिलती है। माकियावेली के लिए, राज्य "पुरुषों पर शक्ति प्रभुत्व" है। इन्होंने सभी नैतिक विचारों को दरकिनार रखकर सरकार की ताकत और स्थायित्व को अधिक महत्व दिया है। हालांकि, उनके समकालीन, बोडिन के लिए एक संप्रभु बनाने के लिए शक्ति पर्याप्त नहीं थी; स्थाई होने के लिए नियम का नैतिकता के साथ पालन होना चाहिए, और ये निरंतर होना चाहिए–यानि कि, उत्तराधिकार स्थापित करने का साधन। थॉमस हॉब्स, जॉन लॉक तथा जे जे रूसो ने राज्य की, एक सामाजिक अनुबंध के नतीजे के रूप में व्याख्या की है जो कि शासक और उसके द्वारा शासित लोगों के बीच एक समझौता है, जिसमें दोनों के अधिकार और उनके कर्तव्यों को परिभाषित किया गया है। इस सिद्धांत के अनुसार, प्राचीन काल में, मनुष्य प्रकृति की एक अराजक स्थिति में पैदा हुए थे, जो विशेष संस्करण के अनुसार खुश या दुखी था। फिर उन्होंने, प्राकृतिक कारणों का प्रयोग करके, एक समाज (और एक सरकार) का गठन आपस में एक अनुबंध के माध्यम से किया। 20वीं शताब्दी में, राज्य की संकल्पनाओं का कार्यक्षेत्र अराजकता से लेकर, जिसमें राज्य अनावश्यक और यहां तक कि हानिकारक माना जाता था, जिसे किसी प्रकार के नियंत्रण से संचालित किया गया, कल्याणकारी राज्य तक था, जिसमें अपने सदस्यों के अस्तित्व के लिए सरकार को जिम्मेदार ठहराया गया और सरकार को वंचितों के लिए काम करने का जिम्मा सौंपा गया।

आधुनिक राज्य को राष्ट्र राज्य के रूप में पहचाना जाता है। राज्य अपने वर्तमान चरित्र को हज़ारों वर्षों की ऐतिहासिक प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त कर पाया है। यह धर्म, संबंध, युद्ध, संपत्ति, राजनीतिक चेतना और तकनीकी प्रगति जैसे विभिन्न कारकों की अंतःक्रिया है। राज्य के इतिहास के विकास की प्रक्रिया में, निम्नलिखित अभिरूप हैं– जनजातीय राज्य, पूर्वी साम्राज्य, यूनानी शहर राज्य, रोमन विश्व साम्राज्य, सामंती राज्य और आधुनिक राष्ट्र राज्य। 1648 में वेस्टफेलिया की संधि पर हस्ताक्षर किए जाने के बाद आधुनिक राष्ट्र राज्य का उदय हुआ। इसके कारण क्षेत्रीय राज्य का उत्थान हुआ जिसका राजनीतिक प्रभुत्व एक विशेष क्षेत्र में रहा, जिसने बाहरी क्षेत्र से घरेलू क्षेत्र अलग किया। क्षेत्र का अलग-अलग राज्यों में अपनी राष्ट्रीय भावना के आधार पर विभाजन ने, आधुनिक राष्ट्र-राज्य की स्थापना के लिए मार्ग प्रशस्त किया और उसके साथ ही अंतरराष्ट्रीय कानून, राज्यों की कानूनी समानता और संप्रभुता के आधुनिक सिद्धांत का उदय हुआ। अमरीकी और फ्रांसीसी क्रांतियों ने राष्ट्र राज्यों के उत्थान में योगदान दिया। राज्य की आधुनिक संकल्पना पर उदारवादी और मार्क्सवादी दृष्टिकोणों का प्रभुत्व है। उदारवादी परिपेक्ष्य सक्रिय है क्योंकि यह समय के साथ व्यक्तियों और समाज की ज़रूरतों और हितों के आधार पर बदलता रहा है। राज्य का प्रारंभिक उदारवादी दृष्टिकोण नकारात्मक था क्योंकि इसने व्यक्तिगत मामलों में हस्तक्षेप न करने का समर्थन किया था। हालांकि, 20वीं शताब्दी का उदारवाद कल्याणकारी राज्य से संबंधित है जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक हित को मिलाने की कोशिश करता है। राज्य पर समकालीन व्याख्यान नव-उदारवाद से प्रभावित है, जहां राज्य से न्यूनतम भूमिका निभाने की उम्मीद की जाती है और बाज़ार को प्रमुखता दी जाती है। मार्क्सवादी धारणा राज्य के उदारवादी होने के विचार को नकारती है, राज्य को वर्ग का उपकरण समझती है और सर्वहारा क्रांति द्वारा ऐसा समाज बनाने की कोशिश करती है जिसमें न तो कोई वर्ग हो, न ही कोई राज्य। हालांकि, रूस में रूसी क्रांति के बाद ऐसा नहीं हुआ और वर्ग रहित और राज्य रहित राज्य की स्थापना होने की बजाय, हमने सोवियत काल के दौरान शक्ति को कुछ लोगों के हाथों में जाते हुए देखा। राज्य के नारीवादी

दृष्टिकोण को मुख्य रूप से दो कोणों से देखा जा सकता है – उदार और कट्टरपंथी। उदार नारीवादी लोग कहते हैं कि पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता लाने में राज्य एक भूमिका निभा सकता है; इसके लिए वो कुछ कदम उठा सकता है जैसे, महिलाओं के लिए संसद में सीटें बढ़ाकर, महिलाओं के लिए कल्याणकारी योजनाएं उन तक पहुंचा कर आदि। दूसरी तरफ, कट्टरपंथी राज्य को ताकत के एक साधन के रूप में देखते हैं और समाज में महिलाओं की असमान स्थिति के लिए वे एक परिवार में श्रम के असमान वितरण को दोष देते हैं। इसलिए, वे इस उदारवादी विचार से लड़ते हैं कि राज्य निष्पक्ष और तटस्थ हैं।

14.3 परिवार की संकल्पना

समाज में परिवार एक बुनियादी और बहुत महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है। परिवार को एक सार्वभौमिक, स्थायी और व्यापक संस्था के रूप में देखा जाता है। सभी समाजों में, दोनों छोटे और बडे, सभ्य और असभ्य, प्राचीन और आधुनिक, परिवार एक या दूसरे रूप में मौजूद हैं। परिवार एक सामाजिक समूह है जिसमें आमतौर पर पिता, माँ, एक या एक से अधिक बच्चे और कभी-कभी निकट और दूर के रिश्तेदार भी शामिल होते हैं। परिवार को निम्नलिखित परिभाषाओं के माध्यम से बेहतर समझाया जा सकता हैः

एलियट और मेरिल के मुताबिक, "परिवार एक जैविक सामाजिक इकाई है जो पति, पत्नी और बच्चों से बनी है"। बर्गेस और लॉक ने परिवार को इस प्रकार परिभाषित किया है– "परिवार , व्यक्तियों का एक समूह है जो शादी के संबंध से, खून के संबंध से या गोद लेने की प्रक्रिया से जुड़ा है। एक घर में अपनी अपनी सामाजिक भूमिकाओं में पति और पत्नी, माता और पिता, बेटा और बेटी, भाई और बहन, आपस में बातचीत करते हैं, ताल्लुक रखते हैं और आम संस्कृति बनाते हैं।" रॉस के मुताबिक, परिवार की चार उप-संरचनाओं में पहचान की जा सकती हैः

- पारिस्थितिक या पर्यावरणीय उप-संरचनाः यानि कि, परिवार के सदस्यों व उनके परिवारों की स्थान संबंधी व्यवस्था।
- अधिकारों व कर्तव्यों की उप-संरचनाः अर्थात, गृहस्थी में श्रम का या काम का विभाजन।
- शक्ति और प्रभुत्व की उप-संरचनाः यानि कि, दूसरों के कार्यों पर नियंत्रण रखना, और
- भावनाओं की उप-संरचनाः यानि कि, एक परिवार के सदस्यों के बीच संबंध।
- परिवार के कई कार्य होते हैं, जिनकी चर्चा आगे आने वाले अनुच्छेदों में की गई है।

14.3.1 परिवारः मूल सामाजिक इकाई

मनुष्यों के अस्तित्व के लिए प्रजनन आवश्यक है, और सभी समाजों में अपने सदस्यों को प्रतिस्थापित करने का एक तरीका होना चाहिए। परिवार अपने एजेंट, विवाह संस्था के द्वारा, पुरुष का यौन व्यवहार नियंत्रित करता है। परिवार में प्रजनन की प्रक्रिया संस्थागत होती है। इस प्रकार, परिवार प्रजनन के कार्य में वैद्यता का सूत्रपात करता है। अपने प्रजनन कार्य को संतोषप्रद पूरा करके, परिवार ने प्रजातियों के प्रचार तथा मानव जाति के स्थाईकरण को संभव बना दिया है। परिवार एक ऐसी संस्था है जो अपने सदस्यों को मानसिक और भावनात्मक संतुष्टि प्रदान करती है। व्यक्ति पहले अपने माता-पिता के परिवार में स्नेह का अनुभव करता है क्योंकि माता-पिता और भाई-बहन उन्हें प्यार, सहानुभूति और स्नेह देते हैं। परिवार दो काम और भी करता है – व्यक्ति के लिए प्रतिष्ठा निर्माण और सामाजिक पहचान। परिवार उत्तरदायित्व की भावना का निर्माण भी करता है। जातीयता, राष्ट्रीयता,

धार्मिक, आवासीय, वर्ग स्थिति एवं कभी-कभी राजनीतिक व शैक्षिक स्थिति सभी परिवारों द्वारा अपने सदस्यों को प्रदान की जाती है। एक परिवार के सदस्य होने का मतलब है कि कुछ कानूनी और सांस्कृतिक अधिकार और ज़िम्मेदारियां मिलना, जो कि औपचारिक कानूनों के साथ साथ अनौपचारिक परंपराओं में समाहित है। उदाहरण के तौर पर, अमरीका में, माता पिता के ऊपर अपने बच्चों को बुनियादी ज़रूरतें जैसे भोजन, आश्रय, कपड़े इत्यादी उपलब्ध कराना कानूनी दायित्व होता है। यदि वे ऐसा करने में विफल होते हैं तो उनको उपेक्षा या दुर्व्यवहार के कानूनी आरोपों का सामना करना पड़ सकता है।

14.3.2 समाजीकरण का एक एजेंट (अभिकर्त्ता)

परिवार एक व्यक्ति में संस्कृति हस्तांतरण के साधन के रूप में कार्य करता है। परिवार न केवल मानव जाति की जैविक निरंतरता की गारंटी देता है बल्कि समाज की सांस्कृतिक निरंतरता भी प्रदान करता है जिसका यह एक हिस्सा है। यह विचारों और विचारधाराओं को, लोक रीतियों और आचार-विचार, रीति रिवाज़ों, विश्वास और मूल्यों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक प्रसारित करता है। परिवार समाजीकरण का एक एजेंट (अभिकर्त्ता) भी है। समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्ति अपने समूह के आदर्शों को अच्छे से आत्मसात करे ताकि उसका एक विशिष्ट व्यक्तित्व उभर कर आए। परिवार बच्चों को समाज के मूल्यों, नैतिकताओं, मान्यताओं और समाज के आदर्शों के बारे में शिक्षा प्रदान करता है। यह अपने बच्चों को बड़ी दुनिया में भागीदारी के लिए तैयार करता है और एक बड़ी संस्कृति से परिचय कराता है। यह एक मुख्य एजेंसी है जो समुदाय की नई पीढ़ी को जीवन के लिए तैयार करती है। यह बच्चों को भावनात्मक रूप से प्रशिक्षित भी करते हैं। यह व्यक्तित्व की मूल योजना प्रस्तुत करते हैं। यथार्थ में, ये बच्चों के व्यक्तित्व को आकार देते हैं। सांस्कृतिक लक्ष्यों के संदर्भ में, परिवार बच्चों को अनुशासित करने हेतु एक तंत्र या प्रक्रिया है। ये असभ्य शिशु को सभ्य वयस्क में परिवर्तित करते हैं। एक परिवार अपने बच्चे को औपचारिक शिक्षा के लिए आधार प्रदान करता है। बड़े परिवर्तनों के बावजूद, परिवार अपने बच्चे को सामाजिक दृष्टिकोण और आदतों पर मूल प्रशिक्षण देता है जो कि सामाजिक जीवन में वयस्क भागीदारी के लिए महत्वपूर्ण है। जैसा आचरण एक व्यक्ति अपने परिवार से सीखता है, वैसा ही व्यवहार सामाजिक नियंत्रण वाले घटकों जैसे स्कूल अधिकारी, मित्र, धार्मिक नेता तथा पुलिस के साथ भी करता है।

14.3.3 लोकतंत्र का आधार

परिवार, लोकतंत्र के विकास के लिए आधार का काम करता है। घर वह जगह है जहां एक व्यक्ति अपने बारे में शुरुआती विचार पाता है, अन्य लोगों के प्रति दृष्टिकोण, किसी के निकट पहुंचने की प्रवृत्ति, समस्याओं को हल करने की आदत आदि विकसित करता है। बच्चे घर पर ही सहयोग, प्रतिबद्धता, बलिदान तथा आज्ञाकारिता सीखते हैं, जोकि स्वशासन की नींव रखते हैं। बच्चे माता-पिता से काफ़ी कुछ सीखते है जैसे कि आभाव से सामंजस्य बिठाना, दूसरों की देखभाल करना, खुश रहना, अपने कर्तव्यों को पूरा करना, नागरिकता के महत्वपूर्ण कौशल तथा पारस्परिक सम्मान और सहयोग के कौशल। हमारे जीवन और सरकार के परस्पर संबंध खासकर स्व-सरकार के साथ, बच्चा सबसे पहले घर पर सीखता है। लोकतंत्र में घर परिवार सबसे महत्वपूर्ण शिक्षण संस्थान होता है। राजनीतिक समाजीकरण का एक प्राथमिक एजेंट परिवार है, जहां बच्चे राजनीतिक दृष्टिकोण, विचारधाराओं और नीतियों को विरासत में पाते हैं, जिनका उनके ऊपर काफी लंबा प्रभाव पड़ता है। इसकी बहुत संभावना है कि उनका प्रारंभिक वर्षों का मतदान व्यवहार अपने परिवार के सदस्यों के मतदान के नमूने की छवि दर्शाता हो।

14.3.4 अनौपचारिक सामाजिक नियंत्रण का अभिकरण

परिवार ने हमेशा सामाजिक नियंत्रण का एक मज़बूत माध्यम प्रदान किया है। माता-पिता बच्चों को समाज में स्वीकार्य योग्य व्यवहार के संबंध में प्रत्यक्ष दिशानिर्देश प्रदान करते हैं। परिवार के माध्यम से सामाजिक नियंत्रण सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरीकों से हासिल किया जा सकता है। बच्चे जहां अपने माता-पिता से प्रशंसा प्राप्त करने के इच्छुक होते हैं, तो वहीं किसी भी प्रकार की अवज्ञा के लिए मिलने वाली सज़ा से भी बचना चाहते हैं। सामाजिक नियंत्रण सिद्धांत के अनुसार, जो लोग सामाजिक तौर पर एकीकृत होते हैं, उनका व्यवहार सामाजिक रूप से स्वीकार्य होने की अधिक संभावना होती है और उनसे आपत्तिपूर्ण व्यवहार की संभावना कम होती है। इस प्रकार, परिवार द्वारा प्रस्तुत सामाजिक एकीकरण, सामाजिक रूप से स्वीकार्य व्यवहार को प्रोत्साहित करने में मदद करता है। असफलता के कारण आने वाली पारिवारिक गिरावट और किशोरावस्था के आपराधिक व्यवहार के बीच के रिश्ते को लंबे समय से जाना जाता है। इस कारण, समाज की पारिवारिक संरचना को मज़बूत करने और स्थिरता बनाए रखने में गहरी रुचि होती है, ताकि इन समस्याओं का प्रभाव हमारी युवा पीढ़ी पर ना पड़े और साथ ही बाकी समाज पर बोझ न बढ़े। ये सामाजिक हित सरकार को शादी और परिवार जैसी रीतियों एवं संरचनाओं को दुरूस्त रखने के लिए प्रेरणा देते हैं। आधुनिकीकरण के आगमन के साथ, परिवार जैसी संस्था कई परिवर्तनों से गुज़र रही है, जैसा कि हम देख सकते हैं, एकल माता या पिता, तलाक दरों में बढ़ोत्तरी, सरोगेसी (किराए की कोख) तथा छोटे या मूल परिवारों की संख्या में वृद्धि। इन परिवर्तनों को अनुकूलता से अपना लेना ताकि राज्य व परिवार का रिश्ता सम्मानुकुल रहे, यह किसी भी राज्य या सरकार के लिए एक चुनौती है।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) आप परिवार की संस्था से क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

14.4 राजनीतिक सिद्धांत में परिवार और राज्य का संबंध

राजनीतिक विज्ञान में परिवार और राज्य के संबंध जैसे विषय का अध्ययन एक सामान्य धारणा के कारण कम हुआ है कि परिवार किसी व्यक्ति का निजी मामला है और राज्य या सरकार को इससे दूर रहना चाहिए। पारिवारिक मामलों में राज्य के हस्तक्षेप पर बहस चलती रही है। जो लोग राज्य का समर्थन करते हैं उनका मानना है कि परिवार एक सार्वजनिक और राजनीतिक इकाई है और राज्य का उसके प्रबंधन में हाथ होना चाहिए। इसके विपरीत, अन्य लोगों का मानना है कि परिवार एक निजी और गैर-राजनीतिक संस्था है जो कि परिवार के सदस्यों द्वारा ही संचालित किया जाना चाहिए, न कि राज्य द्वारा । इस संदर्भ में, आइए राजनीतिक सिद्धांत से संबंधित बहस के मुख्य दृष्टिकाणों का अध्ययन करें।

14.4.1 पारंपरिक दृष्टिकोण

प्राचीन ग्रीक काल में, यह व्यापक धारणा थी कि परिवार एक निजी संस्थान है और उसमें राज्य को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। हालांकि, ग्रीक दार्शनिक प्लेटो का इसके विपरीत विचार था और उनके हिसाब से परिवार संस्था को राज्य की दया पर निर्भर होना चाहिए। प्लेटो ने अपनी पुस्तक, "दी रिपब्लिक" में बच्चों के सामूहिक पालन पोषण, शिक्षा और स्वामित्व की वकालत की है। उनका मानना था कि निजी संपत्ति और परिवार, राज्य में सभी बुराइयों और भ्रष्टाचार के स्रोत हैं। परिवार की ओर संवेदना और स्वामित्व की भावनाएं एक आदमी को स्वार्थी बना देती है और यही भावनाएं उस व्यक्ति की राज्य के प्रति प्रतिबद्धता को भी कम कर देती है। प्लेटो ने अपने स्वयं और किसी अन्य के बीच कोई भेद न रखते हुए, व्यक्ति, परिवार और राज्य के बीच एकता देखी। इसलिए, उन्होंने पत्नियों और संपत्तियों के साम्यवाद का तर्क दिया, जहां विवाह और निजी संपत्ति को खत्म कर दिया जाएगा और आदर्श राज्य द्वारा इन्हें मान्यता नहीं दी जाएगी। हालांकि, प्लेटो ने राज्य पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया है, यह पारिवारिक मामलों में भी हस्तक्षेप कर सकता हैं। प्लेटो के विचारों में महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता की कमी भी है क्योंकि इनमें महिलाओं को राज्य के तहत केवल एक ग्रहणकर्ता और निष्क्रिय प्रजा की तरह देखा जाता है। प्लेटो के शिष्य, अरस्तु उनसे सहमत नहीं थे, उन्होंने अपनी पुस्तक "पॉलिटिक्स" में तर्क दिया कि राज्य को परिवार संस्था का सम्मान करना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि व्यक्ति का परिवार से राज्य की ओर जाना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। उनके अनुसार, एक गृहस्थी में परिवार, संपत्ति और दास शामिल होते हैं। उन्होंने कहा कि परिवार नैतिकता का पालना है और संपत्ति गृहस्थी की एक आवश्यक विशेषता है। संपत्ति का स्वामित्व उस व्यक्ति को सुरक्षा की भावना प्रदान करता है जो अपनी सम्पन्नता बढ़ाना चाहता है। अरस्तु ने परिवार संस्था और निजी संपत्ति का समर्थन इस आधार पर किया कि ये एक व्यक्ति के नैतिक गुणों के विकास की ज़रूरत है जो कि एक राज्य के कल्याण के लिए आवश्यक है। उसने परिवार को एक पवित्र निजी संबंध के रूप में देखा और इसे व्यक्तिगत क्षेत्र में रखा। हालांकि, उनका मानना था कि परिवार में मर्द औरत से श्रेष्ठ है तथा उन्होंने दासों को भी उचित आदर नहीं दिया क्योंकि वे मालिक के आदेश के अधीन थे।

14.4.2 मार्क्सवादी दृष्टिकोण

मार्क्सवाद ने परिवार और राज्य के संबंधों को समझाते हुए एक संघर्ष के परिप्रेक्ष्य को सामने रखा, जिसमें सामाजिक संघर्ष और असमानता महत्वपूर्ण है। परिवार के बारे में मार्क्सवादी सिद्धांत का ध्यान इस बात पर केन्द्रित था कि कैसे पूंजीवादी व्यवस्था, जो कि पूंजीपतियों और श्रमिकों के बीच शोषण के संबंध को बनाए रखती है, अन्य सामाजिक संस्थानों जैसे परिवार को रूप प्रदान करती है, जो कि अंत में पूंजीवादी व्यवस्था को ही मज़बूत करने में मदद करता है। परिवार, पूंजीवाद की खपत इकाई के रूप में सेवा करके उसकी सहायता करता है। मार्क्सवादियों का यह भी मानना है कि छोटा परिवार शासक वर्ग के लिए एक साधन, एक संस्थान है, जो कि अपने सदस्यों को शासक वर्ग के आगे समर्पण करना सीखाता है। फ्रेडरिक एंजल्स ने तर्क दिया कि तीनों व्यवस्थाएं निजी संपत्ति, परिवार और राज्य आपस में जुड़े हुए हैं और पारिवारिक संबंध संपत्ति के संबंधों के जवाब में विकसित होते हैं। उनकी पुस्तक 1884 में प्रकाशित "दी ओरिजिन आफ दी फैमिली, प्राइवेट प्रापरटी एंड दी स्टेट", परिवार की उत्पत्ति और उत्पादन के तरीकों में परिवर्तन को उसके विकास से जोड़ने के लिए और निजी संपत्ति एवं पूंजीवाद के उत्थान का अनुगमन करती है। एंजल्स का मानना था कि मानव विकास के शुरूआती चरणों में, संपत्ति सामूहिक स्वामित्व में थी और परिवार का कोई अस्तित्व नहीं था। समुदाय स्वयं ही एक परिवार था और यौन संबंध के लिए कोई सीमा नहीं थी। लेकिन, संपत्ति के निजी स्वामित्व का प्रश्न उभरकर

आने पर और वारिस और उत्तराधिकार के विचार आने पर पितृत्व का महत्व बढ़ गया। इस कारण एक स्त्री से विवाह करने का नियम बनाया गया, जिससे वारिस की वैधता और महिलाओं की कामुकता को नियंत्रित करने की बात कही गई। मार्क्स और एंजल्स उदारवादियों द्वारा बनाए गए सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बीच सतही विभेदन की भी आलोचना करते हैं। मार्क्स ने कहा कि राज्य निजी क्षेत्र (परिवार) से दूर नहीं रह सकता और यह परिवार में विरोधाभासों को पुनः उत्पन्न करता रहता है।

14.4.3 उदारवादी परिप्रेक्ष्य

सार्वजनिक और निजी भेद का विचार उदार परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है। आइजिया बर्लिन ने अपने लेख "टू कॉनसेप्टस ऑफ लिबर्टी" में कहा है कि निजी जीवन और सार्वजनिक प्राधिकरण के क्षेत्रों के बीच सीमा रेखा खींची जानी चाहिए। निजी व सार्वजनिक भेद की संकल्पना का यूरोपीय मूल है, जो स्वतंत्रता को अधिकारों के माध्यम से प्रकट करता है। सार्वजनिक क्षेत्र का स्वामित्व राज्य के पास होता है और निजी क्षेत्र का व्यक्ति के पास। पारंपरिक उदारवादी विचारक परिवार को एक प्राकृतिक, जैविक और व्यक्तिगत इकाई मानते आए हैं। वे दृढ़ता से कहते हैं कि परिवार व्यक्तियों से बना है जो इस संस्थान में अपनी इच्छा से आते हैं और राज्य को उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। जॉन लॉक ने तर्क दिया कि परिवार की उत्पत्ति एक पुरुष और महिला की स्वैच्छिक सहमति से होती है और राज्य को उसमें हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए। जॉन रॉल्स का कहना है कि परिवार सामाजिक संस्थानों में से एक है जिसका मूल्यांकन न्याय के सिद्धांत द्वारा किया जाना चाहिए। उनके लिए पारंपरिक परिवार ही न्याय का नमूना थे परंतु परिवार की संकल्पना उनके न्याय के सिद्धांत का महत्वपूर्ण हिस्सा नहीं थी। जे एस मिल ने नैतिकता और अच्छी राजनीति के बीच की कड़ी को पहचाना है। "यदि हम अपने आप से उन कारणों और स्थितियों को पूछें जिन पर अच्छी सरकार पूरी तरह से निर्भर करती है, तो हम पाएंगे कि, उनमें से मुख्य है मनुष्य के वो गुण जो समाज बनाते हैं तथा जिस समाज पर सरकार शासन करती है।" उनका मानना था कि अच्छे नागरिक मशरूम की तरह से अपने आप नहीं उग जाते हैं, बच्चे को अच्छाई और ज्ञान के साथ बड़ा करना प्रोत्साहित करना एक सामाजिक ज़िम्मेदारी है। मिल ने कहा कि लोकतांत्रिक नागरिकता के लिए परिवार एक प्रशिक्षण का मैदान है और परिवार को समानता और न्याय के उन मूल्यों को प्रतिबिंबित करना चाहिए जिस पर लोकतंत्र आधारित है। इसलिए वे महिलाओं के साथ वर्तमान पारिवारिक संरचना में होने वाली असमानताओं की निंदा करते हैं, क्योंकि इससे बच्चों में लोकतांत्रिक चरित्र को बढ़ावा नहीं मिलता। किन्तु वे परिवार के अंदर श्रम में लैंगिक विभाजन को न्यायसंगत बताते हैं क्योंकि वो सामान्य रीति-रिवाज़ों और सहमति पर आधारित हैं।

14.4.4 नारीवादी दृष्टिकोण

नारीवादी लोगों ने महिलाओं के जीवन पर पारिवारिक जीवन के प्रभाव का विश्लेषण करने की मांग की है। विभिन्न नारीवादी विचारकों के बीच उनके दृष्टिकोणों और मुख्य प्रयोजनों में कई मतभेद होने के बावजूद, वे एक बात पर सहमत थे कि परिवार में महिलाओं की स्थिति पुरुषों के मुकाबले कमज़ोर होती है और उनका विभिन्न तरीकों से शोषण किया जाता है। मार्क्सवादी नारीवादियों का मानना है कि पूंजीवाद ही मुख्य शोषक है। महिलाओं द्वारा बिना वेतन घरेलू कार्य करना शोषण के रूप में देखा जाता है। मार्क्सवादियों की तरह, उनका मानना है कि परिवार भी पूंजीवाद की चाकरी भविष्य की श्रमिक शक्ति उत्पन्न करके करता है, किन्तु उन्होंने दृढ़तापूर्वक एक बात कही कि वो परिवार नहीं महिलाएं ही हैं जो

अधिक पीड़ित हैं। ये महिलाएं ही होती हैं जो बच्चों को धारण करती हैं जन्म देती हैं और उनकी देखभाल अपनी मुख्य ज़िम्मेदारी मानती हैं। उसमें भी महिलाओं का शोषण किया जाता है और उनसे उम्मीद की जाती है कि वे वो निर्गम द्वार बने जहां उनके पति अपनी पूरी कुंठा और गुस्सा निकाल सकें जो कि वे अपने दफ्तर में अनुभव करके आए हैं। इस प्रकार वे अपने मालिकों के खिलाफ विद्रोह करने से बचे रहते हैं। उग्र नारीवादी अन्य नारीवादियों से सहमत हैं कि परिवारों में महिलाएं ही कष्ट भोगती हैं। फिर भी वे पूंजीवाद को शोषण का मुख्य स्रोत नहीं मानते। उनका ध्यान मुख्यतः पुरुषों और पुरुष प्रधान समाज की प्रकृति पर है। उनका तर्क है कि घर पर सहभागियों के बीच असमानताएं इस तथ्य का परिणाम है कि अधिकांश घरों के मुखिया पुरुष होते हैं। इसका तात्पर्य है कि पुरुषों के पास निर्णय लेने की शक्ति अधिक होती है, परिवार के पास जो भी है उसका सबसे अधिक उपभोग पुरुष करते हैं और उनका नियंत्रण परिवार के वित्त पर भी होता है। जे एस मिल की प्रसिद्ध कहावत है "एक भेदभाव रहित परिवार नागरिकों को बराबरी सिखाने लिए उपजाऊ ज़मीन साबित होता है।" पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता लाने के लिए उदारवादी मानते हैं कि संवैधानिक सुधार होना चाहिए जिससे पुरुष भी घरेलू कामकाज में अपना योगदान दें। इसे नागरिक नारीवाद कहते हैं। समाजवादी नारीवादी चाहते हैं कि मुक्त जन्म नियंत्रण, गर्भपात, महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सुविधाओं का प्रचार हो और राज्य द्वारा घरेलू श्रम को मान्यता प्राप्त हो। उग्र नारीवादी चाहते हैं कि महिलाओं को सक्रिय नागरिक बनाने के लिए उन्हें सार्वजनिक क्षेत्र में प्रवेश मिलना चाहिए और राज्य को पारिवारिक मामलों में हस्तक्षेप की अनुमति मिले, ताकि लिंग आधारित भेदभाव समाप्त हों। थॉर्न और यालोम का तर्क है कि नारीवाद ने परिवार को समझने के लिए कई व्यापक विषयों पर योगदान दिया है। वे हैं:

- पहला, नारीवादियों ने "अखंड परिवार" की विचारधारा को चुनौती दी, जिसने छोटे परिवार को बढ़ाया जिसमें एक पति है रोटी कमानेवाला और एक पूर्णकालिक पत्नी और माँ, यही एकमात्र वैध रूप है।
- नारीवादियों ने इस बात को पहचाना कि, लिंग, पीढ़ी, जाति और वर्ग जैसी संरचनाओं के परिणामस्वरूप पारिवारिक जीवन में अलग-अलग अनुभव होते हैं, जोकि छोटे परिवार, मातृत्व एवं एक प्रेमपूर्ण आश्रय देने वाले परिवार की महिमा के आगे धुंधले पड़ जाते हैं।
- नारीवाद ने निजी और सार्वजनिक के बीच पारंपरिक विभाजन को चुनौती दी है और परिवार की सीमाओं पर सवाल खड़े किए हैं। उनके अनुसार, परिवार व राज्य की सीमाओं का विभाजन मुश्किल है क्योंकि परिवार व राज्य में करीब का रिश्ता है – जैसे कि राज्य की कानूनी व कल्याण प्रणाली, स्कूल, शिशुपालन आदि गतिविधियाँ परिवार पर असर डालती हैं। इस कारण, 1970 में नारी आंदोलन का मुख्य नारा था "दी पर्सनल इज़ पॉलिटिकल"।

बोध प्रश्न 2

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिये गये स्थान का उपयोग करें।

ब) अपने उत्तर को इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से मिलायें।

1) परिवार और राज्य पर प्लेटो के क्या विचार हैं?

.....

.....

.....

2) एक परिवार में महिलाओं की स्थिति पर जे एस मिल के विचारों पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

14.5 सारांश

राजनीति विज्ञान में परिवार व राज्य का संबंध, एक कम अध्ययन किया जाने वाला विषय रहा है क्योंकि यह सामान्य विश्वास है कि परिवार किसी व्यक्ति का एक निजी मामला है और राज्य को इससे दूर रहना चाहिए। पारिवारिक मामलों में राज्य के हस्तक्षेप पर बहस चलती रही है। जो राज्य के हस्तक्षेप का समर्थन करते हैं उनका मानना है कि परिवार एक सार्वजनिक और राजनीतिक इकाई है और इसके प्रबंधन में राज्य का मत ज़रूर होना चाहिए। इसके विरुद्ध, अन्य लोगों का मानना हैं कि परिवार एक निजी और गैर राजनीतिक संस्था है जिसे परिवार के सदस्यों द्वारा ही चलाया जाना चाहिए न कि राज्य द्वारा। प्लेटो ने परिवार में राज्य के हस्तक्षेप के पक्ष में तर्क दिया जबकि उनके शिष्य अरस्तु ने विपक्ष में। "परिवार" पर मार्क्सवादी सिद्धांतों का ध्यान इस बात पर केंद्रित है कि कैसे पूंजीवादी व्यवस्था किसी अन्य सामाजिक संस्था जैसे परिवार को आकार देती है जो कि उसे मज़बूत करने में मदद कर सके, जबकि उस व्यवस्था में पूंजीपतियों और श्रमिकों के बीच शोषणकारी संबंध होते हैं। उदारवादियों ने सार्वजनिक-निजी के भेद को ध्यान में रखते हुए परिवार को निजी क्षेत्र में रखने का समर्थन किया है। हालांकि, नारीवादी परिप्रेक्ष्य ने इस भेद को चुनौती दी है और महिलाओं व पुरुषों की बीच समानता के पक्ष में तर्क दिया है। उग्र नारीवादी परिवार में राज्य का हस्तक्षेप इसलिए चाहते हैं ताकि पितृसत्ता से महिलाओं पर होनेवाले उत्पीड़न को रोका जा सके। यदि कोई परिवार और राज्य के संबंध को ध्यानपूर्वक देखे तो, राज्य पहले से ही परिवार के मामले में हस्तक्षेप कर रहा है क्योंकि विवाह और तलाक के कानून राज्य द्वारा ही बनाए गए हैं। राज्य ने कानूनी रूप से, विवाह की संस्था और इसे कैसे भंग किया जा सकता है को परिभाषित किया है। यहां तक कि किसी शादी को समाप्त करने (तलाक) के लिए राज्य की मंजूरी आवश्यक होती है। इसलिए वर्तमान के विवाह और परिवार प्रणाली में जो ख़ामियाँ हैं उनकी ज़िम्मेदारी काफी हद तक राज्य की ही है।

14.6 संदर्भ

अरिस्टोटल. (1981). "दी पालिटिक्स"(राजनीति) न्यूयार्क : पेंगुएन

एंजेल्स, फ्रेडरिक. (2010). "दी ओरिजिन ऑफ दी फैमिली, प्राइवेट प्रापर्टी एंड दी स्टेट"(परिवार, निजी संपत्ती एवं राज्य का प्रारंभ), न्यूयार्क : पेंगुएन

मिल, जे एस, (1869), "दी सबजैक्शन ऑफ वूमेन"(महिलाओं की पराधीनता)

स्क्रूटेन, रोजर, (2007), "दी पॉलग्रेव मैकमिलन डिक्शनरी ऑफ पालीटिकल थौट"(पॉलग्रेव मैकमिलन के राजनीतिक विचारों का शब्दकोष), हैम्पशियरः पॉलग्रेव मैकमिलन

थोर्न, बी एंड एम यालोम (1992), "रीथिंकिंग दी फैमिली : सम फैमिनिस्ट क्वाश्चनस"(परिवार पर पुनर्विचारः कुछ महिलावादियों द्वारा उठाए गए प्रश्न), न्यूयार्क : लॉंगमैन

दी एडिटर्स ऑफ एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, स्टेट, यू आर एल : https://www.britannica.com/topic/state-sovereign-political-entity

14.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में एलियट और मेरिल तथा बर्गेस और लाक की परिभाषाओं को दर्शाना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में पत्नियों और संपत्ति का साम्यवाद उजागर होना चाहिए।

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित दो बिंदुओं पर प्रकाश डालें

- पुरुषों व महिलाओं के बीच समानता
- नागरिक नारीवाद

अध्ययन सामग्री

बैरी, नॉर्मन, *ऐन इण्ट्रोडक्शन टु मॉडर्न पॉलिटिकॅलथिअरी,* मैकमिलन, लंदन, 2000 (अध्याय 8 : लिबर्टी)

हेवुड, एण्ड्रयू, पॅलिटिकॅलथिअरी, मैकमिलन, लंदन, 1999 (अध्याय 9 : फ्रीडम, टॉलेरेशन एण्ड लिबरेशन)

विनोद, एम जे और एम देशपान्डे, 2013 कन्टेम्परेरी पालिटिक्सथिअरी, नई दिल्ली, पी एच आईलर्निंग प्राइवेट लिमिटेड

नोर्मेज, पी. बेरी, ऐनइण्ट्रोक्शन टु माडर्न पॉलिटिकलथिअरी, मैकमिलन, लंदन, 2000

हैल्ड, डैविड, पॉलिटिकलथिअरी टु डे, स्टिबार्ट, रॉबर्ट एम., रीडिंग्स इन सोशल एण्ड पॉलिटिकॅल फिलॉसफी

ऐलन, सी.के., ऐस्पैक्ट्स ऑफ जस्टिस, स्टीवन एण्ड सन्ज़, लंदन, 1955

बेकर, अर्नेस्ट, प्रिंसिपल्स ऑफ़ सोशल एण्ड पॉलिटिकलथिअरी, लंदन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, लंदन, 1967

बैरी, नॉर्मनपी., एन इण्ट्रोडक्शन टु माडर्न पॉलिटिकॅलथिअरी, मैकमिलन, लंदन, 1981

राफ़ैल, डी.डी., प्रॉब्लम्स ऑफ़ पॉलिटिकलफ़िलोसफ़ी, मैकमिलन, लंदन, 1976 (द्वितीय संस्करण)

बेलामी, रिचर्ड और मेसन, एंड्रू (2003). *पॉलिटिकल कॉन्सेप्ट्स,* मेनचेस्टरः मेनचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस.

भार्गव, राजीव और अशोक आचार्य. (2008). *राजनीतिक सिद्धांत : एक परिचय.* नोएडा, पिअरसन.

लास्की, एच. (1925). *ए ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स.* ओक्सोन, रूटलेज.

स्क्रूटन, रॉजर. (2007). *द पल्ग्रेव मैकमिलन डिक्सनरी ऑफ पॉलिटिकलथॉट.* हैम्पशायरः पल्ग्रेव मैकमिलन.

विनोद, एम जे और एम देशपांडे. (2013). *कन्टेमपररी पॉलिटिकलथ्योरी.* नई दिल्लीः पीएचआईलर्निंग प्राइवेट लिमिटेड.

कोहेन, जीन एल. एवं अराटो, एंड्रू (1997), *सिविल सोसाइटी एंड पॉलिटिकलथ्योरी,* यूनाइटेडस्टेट्सः एम आईटी प्रेस

डोरोटाआई. पिट्रज़िक (2001), *सिविल सोसाइटी–कांसेप्चुयल हिस्ट्री फ्रॉम हॉब्बस टू मार्क्स,* मैरीक्यूरी वर्किंग पेपर्स सं. 1, यूनिवर्सिटी ऑफ वेल्स

मुखर्जी, सुब्रत एवं रामास्वामी, सुशीला (2007) *ए हिस्ट्री ऑफ पॉलिटिकलथॉटः प्लेटो टू मार्क्स,* नई दिल्ली : प्रेंटिस हॉल ऑफ इण्डिया

क्यूटसेन, सी. एच. (2010), "इन्वेस्टीगेटिंग दिलीथीसिसः हाऊबैड इज़ डेमोक्रेसी फॉर एशियन इकॉनामिक्स?" *यूरोपियन पॉलिटीकल साइंस रिव्यू,* 2–3, 457–473।

लिपसेट, सीमौरमार्टिन (1959), "सम सोशल रिक्वुजिट्स ऑफ डेमोक्रेसीः इकानामिक डेवलेपमेंट एंड पॉलिटिकल लेजीटीमेसी", *अमेरिकन पॉलिटीकल साइंस रिव्यू,* खण्ड 53, अंक 69, पृ. 105।

प्रज़ेवर्सकी, एड्म, एवं फर्नांडोलोमोंगी. (1993) "पालिटिकलरीजिम्स एंड इकॉनॉमिकग्रोथ", *जर्नल ऑफ इकॉनामिक पर्सपेक्टिव्ज,* खण्ड 7, अंक 3, पृ. 51–69।

प्रजेवर्सकी एड्म, माईकल अल्वारेज, जोस एंटोनियोचीबब एवं फर्नाड़ोलीमोंगी (1996), वाट मैक्स डेमोक्रेसीइंडूर?" *"जर्नल ऑफ डेमोक्रेसी,* खण्ड 7, अंक 1, पष्. 39–55।

सेन अमर्त्य (1999), *डेवलेपमेंट एज फ्रीडम,* ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

भार्गव, राजीव और आचार्या, अशोक (2008), पोलटिकलथ्योरी (राजनैतिक सिंद्धात), नोएडा: पीयरसन।

मिल, जे एस (1998), लिबर्टी एंड अर्द ऐसेज (स्वतंत्रता और अन्य निंबध) न्यू यार्क: आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

पॉपर, के और गोमब्रिच, ई एच (1994), द ओपन सोसाइटी एंडइट्स ऐनीमीज़ (खुला समाज/ मुक्त समाज और इसके दुश्मन), न्यूजर्सीप्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

स्क्रूटन, रोजर (2007), पॉलग्रेव मैकमिलन डिक्शनरी आफ पॉलिटिकल थॉट, (राजनीतिक विचारों का संग्रह) हैम्पशायर : पॉलग्रेव मैकमिलन।

सेन, अमर्त्य (1999), डेवलपमेंट एज़ फ्रीड्म, (स्वतंत्रता के रूपमें विकास) आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

आचार्य, अशोक (2008), "अफरमेटीव एक्शन" इन राजीवभार्गव एवं अशोक आचार्य (संपा.) *पॉलिटिक्लथ्योरी– एक प्रस्तावना,* नई दिल्लीः पीजन्स।

अब्बास, होइयेदा एवं कुमार, रंजनकुमार (2012), *पॉलिटिक्लथ्योरी,* नई दिल्लीः पीयरसन।

अरोड़ा, एन.डी. एवं एस.एस. अवस्थी (2007), *पॉलिटिक्लथ्योरी एंड पॉलिटिक्लथॉट,* नई दिल्लीः, हर आनन्द पब्लिकेशन्स।

रॉल्स, जॉन (1971) *ए थ्योरी ऑफ जस्टिस,* हार्वर्डः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

विनोद, एम. जे और मीना देशपाण्डे (2013), *कंटमपरेरी पॉलिटिक्लथ्योरी,* नई दिल्लीः पी. एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।

आचार्य, अशोक (2008), "अफरमेटीव एक्शन "इनराजीव भार्गव एवं अशोक आचार्य (संपा.) *पॉलिटिक्लथ्योरी– एक प्रस्तावना,* नई दिल्लीः पीजन्स।

अब्बास, होइयेदा एवं कुमार, रंजनकुमार (2012), *पॉलिटिक्लथ्योरी,* नई दिल्लीः पीयरसन।

अरोड़ा, एन.डी. एवं एस.एस. अवस्थी (2007), *पॉलिटिक्लथ्योरी एंड पॉलिटिक्लथॉट,* नइ दिल्लीः, हर आनन्द पब्लिकेशन्स।

रॉल्स, जॉन (1971) *ए थ्योरी ऑफ जस्टिस,* हार्वर्डः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

विनोद, एम. जे और मीना देशपाण्डे (2013), *कंटमपरेरी पॉलिटिक्लथ्योरी,* नई दिल्लीः पी. एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।

अरिस्टोटल. (1981). "दी पालिटिक्स" (राजनीति) न्यूयार्क : पेंगुएन

एंजेल्स, फ्रेडरिक. (2010). "दी ओरिजिन ऑफ दी फैमिली, प्राइवेट प्रापर्टी एंड दी स्टेट" (परिवार, निजीसंपत्ती एवं राज्य का प्रारंभ), न्यूयार्क : पेंगुएन

मिल, जे एस, (1869), "दी सबजैक्शन ऑफ वूमेन" (महिलाओं की पराधीनता)

स्क्रूटेन, रोजर, (2007), "दी पॉलग्रेव मैकमिलन डिक्शनरी ऑफ पॉलीटिकल थौट" (पॉलग्रेव मैकमिलन के राजनीतिक विचारों का शब्दकोष), हैम्पशियरः पॉलग्रेव मैकमिलन

थोर्न, बी एंड एम यालोम (1992), "रीथिंकिंग दी फैमिली : सम फैमिनिस्ट क्वाश्चनस" (परिवार पर पुनर्विचारः कुछ महिलावादियों द्वारा उठाए गए प्रश्न), न्यूयार्क : लॉंगमैन